गायत्री-तत्त्व-दर्शिका

प्रेरक तथा शुभाशीर्वाद प्रदाता ब्रह्मलीन योगीराज बावा बल्लो जी

ॐ

"गायत्री छन्दसां मातेति"

संकलन तथा सम्पादन

प्रो. विश्वमूर्ति शास्त्री

योगीराज परमतपस्वी बावा बल्लो जी
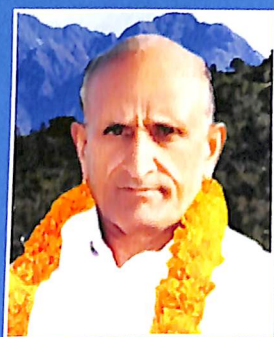
तपोनिष्ठ ब्रह्मलीन
पं. देवराज जी शर्मा

परमतपस्वी सम्माननीय
पं. यशपाल जी शर्मा

गायत्री-तत्व-दर्शिका

प्रेरक तथा शुभाशीर्वाद प्रदाता
ब्रह्मलीन योगीराज बावा बल्लो जी

ॐ

"गायत्री छन्दसां मातेति"

संकलन तथा सम्पादन

प्रो. विश्वमूर्ति शास्त्री

राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त

पूर्व प्राचार्य

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान

मानित विश्वविद्यालय (कोट-भलवाल)

जम्मू तवी

卐 बाबा वल्लो जी के सभी भक्तों के लिए 卐

दो शब्द

कलिमल ग्रसे धर्म सब लुप्तभरा सद् ग्रन्थ।
दंभिह्न निज मति कल्पिकरि प्रकट किए बहु पन्थ।।

कलियुग के प्रभाव से सद् ग्रन्थों का प्रायः लोप हो चुका है। जो सद् ग्रन्थ इस समय उपलब्ध भी हैं उन आदर्शों को बतलाने वाले, उनके माध्यम से जनता को सुशिक्षित करने वाले, सद्गुरुओं का विद्वज्जनों का अभाव सा प्रतीत हो रहा है।

विविध सम्प्रदाय और पंथों के कारण पूरे विश्व में चारों ओर अशान्ति का वातावरण है। हमारी परम्पराएं घिसती जा रही हैं। विगत कई पीढ़ियों से द्विज अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य का मुख्य आधार था, "सन्ध्योपासन" गायत्री तर्पण, पांचयज्ञ, पांचवलि, भगवान् को भोग लगाकर भोजन करना, यह सब दैनिक आचार से बाहिर हो गया है।

हम शास्त्रों के विरुद्ध कर्म करके सुखी कैसे हो सकते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

यः शास्त्र विधिमुत्सज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुख न परांगति।।

जो शास्त्र विधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है- वह न सिद्धि को प्राप्त होता है न परमगति को न सुख को प्राप्त करता है।

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यवस्थितौ।

शास्त्र विधि से नियत कर्म ही करने के योग्य हैं।

कर्तव्य विमुखता के कारण प्रायः सुव्यवस्थाएं अव्यवस्थित हो रही हैं, जिन को समय पर नहीं सुधारा गया तो इनका इलाज असम्भव हो जाएगा। समूचे विश्व में शान्ति लाने के लिए शास्त्रानुकूल जीवन होना अनिवार्य है। हमारी आर्य संस्कृति के अनादि और सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ वेद हैं वेदों का सर्वश्रेष्ठ आधारभूत गायत्री मंत्र है। यह मन्त्र गुरु द्वारा दीक्षित होने पर सभी के लिए समान है—इसके द्वारा विधि-विधान पूर्वक गायत्री उपासना से सभी मनोकामनाएं सिद्ध होती हैं। सन्ध्योपासना में अनेक मन्त्र हैं

परन्तु प्रमुख रूप से गायत्री मन्त्र की ही प्रधानता है, जो लोग सन्ध्या के मन्त्रों का उच्चारण न कर सकें वे आत्मशुद्धि के साथ दीक्षा लिए हुए गायत्री मंत्र का प्रतिदिन एक हजार या पांच माला या एक माला जप अवश्य करें कभी अधिक अशाक्त (सामर्थ्यहीन) होने पर 21 बार तो गायत्री मन्त्र का उच्चारण अवश्य करें।

प्रत्येक सच्चे साधक के लिए चाहे किसी जाति, वर्ण अथवा मत सम्प्रदाय का क्यों न हो उसका इष्ट देवता या कुलदेवता कोई भी हो गायत्री मंत्र की यथा विधि दीक्षा लेकर प्रत्येक व्यक्ति के लिए प्रातः तथा सायंकालीन सन्ध्या में दो दो या एक एक माला जप करना अत्यावश्यक है जिससे वह सूर्य भगवान् प्रसन्न होकर गायत्री मंत्र के माध्यम से सभी सुखों को देंगे।

यह मन्त्र केवल ब्राह्मण वर्ग के लिए नहीं है अपितु यथाविधि दीक्षा लेने पर द्विज मात्र का सभी का उपकार कारक है। यह मन्त्र सार्वभौम है-प्रकाश स्वरूप है ज्ञानस्वरूप है, विधि विधान तथा नियमपूर्वक करने से साधक परिपक्वता की दशा में यह अनुभव करने लगता है कि यह मन्त्र मानव के लिए पथ प्रदर्शिका ज्योति है। अतः उपनयन संस्कार से लेकर सन्यास दीक्षा तक गायत्री मन्त्र ही मानवजाति का (मानव जाति के जीवन का) आधार है।

यह मन्त्र आपत्तियों से, रोगों से और विविध क्लेशों से बचाएगा, यह परम्परा से ऋषिमुनियों के द्वारा प्रदत्त बहुमूल्य सम्पत्ति है, यह मन्त्र सर्वदा रक्षा कवच के रूप में हमें प्राप्त है, इसका सम्मान करना चाहिए इसको सर्वोपरि समझना चाहिए यह आप सबको शान्ति-सुख तथा तेज की पराकाष्ठा तक ले जाएगा।

भारतीय संस्कृति की रक्षा चाहने वालों को विधि विधान पूर्वक सामूहिक रूप से गायत्री का, गायत्री मंत्र के जप का तथा इस मंत्र के द्वारा की जाने वाली अन्य विधियों का आयोजनों के माध्यम से प्रचार प्रसार करना चाहिए। जिसके परिणाम स्वरूप सर्वत्र कल्याण करने वाले भगवान् संसार के मानव मात्र को सन्मार्ग में प्रेरित करें। विविध प्रकार से गायत्री की उपासना के विषय में प्रो.(डॉ.) विश्वमूर्ति शास्त्री जी ने अथक परिश्रम कर के भिन्न भिन्न ग्रन्थों से सारभूत अंशों के द्वारा "गायत्रीतत्वदर्शिका" पुस्तक का जो सम्पादन व प्रकाशन किया है, यह गायत्री उपासकों के लिए तथा गायत्री ज्ञान से अपरिचित भोली-भाली जनता के लिए गायत्री उपासना के द्वारा प्राप्त होने वाली विजय प्राप्ति का एक सोपान है। इसके लिए श्री शास्त्री जी का "बावा बल्लो जी संस्थान" द्वारा आभार व्यक्त करता हूँ।

विशेष– योगीराज बावा बल्लो जी गायत्री की उपासना से परमतपस्वी, साधक और योगीराज कहलाए, अपने आशीर्वाद से आज लाखों भक्तों का कल्याण कर

रहे हैं। जो भक्तजन गायत्री के परम उपासक बावा बल्लो जी का अपनी कार्य सिद्धि के लिए आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते हैं, वे सभी प्रतिदिन तीन हजार, एक हजार अशक्त होने पर एक माला जप अवश्य करें।

बाबा जी के दरबार में बैठ कर आशीर्वाद प्राप्त करने की प्रतीक्षा करते हुए गायत्री मंत्र का जप अवश्य करते रहें।

अन्त में गायत्री माता जी को और सिद्धपीठाधीश्वरी वैष्णवी माता को सादर प्रणाम करके सभी के सुख के लिए रोगरहित रहने के लिए सभी के कल्याण के लिए सभी के दु:खों की निवृत्ति के लिए कामना करता हूँ।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दु:खभाग् भवेत्।।

बाबा वल्लो संस्थान के संयोजक
एवं
वरिष्ठ पं. श्री यशपाल जी शर्मा
गांव मथवार, जम्मू/अखनूर
जय भारत

卐

अवतरणिका

वेद वेदाङ्गों में द्विजमात्र के लिए यज्ञोपवीत धारण के साथ गायत्री की उपासना अत्यावश्यक बताई गई है। ब्राह्मण के लिए सन्ध्यावन्दन के साथ गायत्री मंत्र का जप करना आवश्यक है। वृहत्पाराशर में कहा है कि-

किं वेदैः पठितैः सर्वैः सेतिहासपुराणकैः।
साङ्गैः सावित्रहीनेन न विप्रत्वमवाप्नुयात्॥

अर्थात्-वेद-वेदाङ्ग तथा इतिहास पुराणादिकों के पढने से क्या हुआ, जो गायत्री मंत्र की उपासना से हीन है वह ब्राह्मणत्व को प्राप्त नहीं हो सकता। और भी कहा है कि-

न ब्राह्मणो वेदपाठात् न शास्त्र पठनादपि।
देव्यास्त्रिकालमभ्यासाद् ब्राह्मणः स्यात् द्विजोऽन्यथा॥

अर्थात्-वेद और शास्त्र पढ़ लेने मात्र से ब्राह्मण, ब्राह्मण नहीं कहलाता। गायत्री की त्रिकाल उपासना से (त्रिकाल सन्ध्या से) ब्राह्मण कहलाता है यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह ब्राह्मण न होकर द्विज है। माता पिता से जन्म लेने के कारण 'एकज' कहलाया, यहां द्विज शब्द का अर्थ, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य क्योंकि गायत्री मंत्र के द्वारा दीक्षित होने पर (गुरुदीक्षा लेने के कारण) दूसरा जन्म हुआ इसी कारण इनको द्विज कहा जाता है।

गायत्री ब्रह्म स्वरूपिणी है अतः ब्राह्मण के लिए सन्ध्योपासना और गायत्री मन्त्र का जप परमावश्यक है। "**न गायत्र्याः परं मन्त्रम्**" गायत्री मंत्र से परे कोई मन्त्र नहीं, "**गायत्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः**"-इत्यादि वाक्यों से यह प्रमाणित हो जाता है कि वेदों में गायत्री मन्त्र का स्थान सर्वोच्च है "**गायत्री छन्दसां मातेति**" कहकर गायत्री को वेद माता कहा गया है।

भगवान् श्रीकृष्ण ने "**गायत्री छन्दसामहम्**" गीता में यह कहकर "**वदों में मैं गायत्री हूँ**" इस से स्वयं-भगवान् ने अपने में और गायत्री में ऐक्य माना है। जब मनुष्य प्रतिदिन यथा नियम सन्ध्या, गायत्री जप तथा अन्य धर्म कार्य करता है तो उसकी बुद्धि से अहंकार, जड़ता, अज्ञानता, भ्रान्ति आदि भेदभाव नष्ट हो जाते हैं। सहविवेक, सदाचार तथा सुविचारों का उदय हो जाता है।

जैसे-जैसे मनुष्य उस परमतत्व की प्राप्ति के लिए उपासक-व्यक्ति, "उपास्य" अपने इष्ट देव गायत्री की, उपासना-पूजा-जप-पाठ-ध्यान करता है। वैसे ह धीरे-धीरे वह आनन्द को प्राप्त करता हुआ ईश्वर की ओर प्रवृत्त हो जाता है, जिससे उसको ईश्वर की सत्ता का वास्तविक (सच्चा) ज्ञान होने लगता है।

मानव जीवन को सफल बनाने के लिए द्विज मात्र को अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को नियमित रूप से नित्यकर्म करते हुए "सन्ध्योपासन" और "गायत्री" मन्त्र का जप अपरिहार्य रूप से करना चाहिए, ऐसा करने से "द्विज" धार्मिक, कर्तव्य परायण, तेजस्वी तथा आचारवान् कहलाएगा।

"वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः" के अनुसार यदि चारों वर्णों में ब्राह्मण श्रेष्ठ है तो इस श्रेष्ठता का कारण भी गायत्री की उपासना ही है, क्योंकि ब्राह्मण में ब्रह्मत्व, ब्रह्मतेज गायत्री की उपासना से ही आता है। गायत्री उपासना के अभाव में क्या ब्राह्मण! ब्राह्मण कहलाने के योग्य रहेगा? गायत्री के बल से ही ऋषि, मुनि अत्यन्त तेजस्वी प्रतिभाशाली और बल से सम्पन्न थे।

"महर्षि वसिष्ठ में" अनिर्वचनीय ब्रह्म बल को देखकर विश्वामित्र ने कहा कि- **"धिग्बलं क्षत्रिय बलं, "बलं" ब्रह्म बलं स्मृतम्"** अर्थात् ब्रह्म बल के समक्ष्य, क्षत्रिय बल कुछ भी नहीं है। अपने आप में ब्रह्म बल को विशेष मानकर गायत्री की उपासना करके विश्वामित्र ने ब्रह्म बल प्राप्त कर लिया था।

'गायत्री' वैष्णवी (दुर्गा) सावित्री और सरस्वती भेद से तीन प्रकार की है दूसरे शब्दों में वैष्णवी ही गायत्री, सावित्री, सरस्वती स्वरूपिणी है।

गायत्री के तीन स्वरूपों की अथवा वैष्णवी के तीन स्वरूपों की आराधना करने वाले व्यक्ति के लिए कुछ भी प्राप्त करना शेष नहीं रहता, अपितु सब कुछ प्राप्त कर लेता है।

गायत्री के विषय में, ब्राह्मण ग्रन्थों में, आरण्यक, उपनिषद्, रामायण तथा पुराणों में विविध विस्तार से बहुत कुछ देखा जा सकता है।

सर्वेषामेव वेदानां गृह्योपनिषदां तथा।
सारभूता तु गायत्री निर्गता ब्रह्मणोमुखात्॥

अर्थात्-गायत्री को सभी वेदों का तथा उपनिषदों का सार माना है, क्योंकि ब्रह्मा के मुख से इसकी उत्पत्ति हुई है।

गायत्री मंत्र के जप से सभी पाप तथा पातकोपपातको से छुटकारा मिलता है। गायत्री का उपासक को इस लोक में और परलोक में उभयत्र सुख प्राप्त होता है।

गायत्री का गोत्र सांख्यायन है, इस मंत्र का छन्द-गायत्री नाम वाला है, इसलिए इसको गायत्री कहते हैं। ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न होने के कारण इसका नाम ब्रह्म गायत्री है। इस गायत्री मंत्र के चौबीस अक्षर हैं। इसको सविता कहने का अभिप्राय यही है कि-सृष्टि-स्थिति-संहार कारक प्रकाश के देवता सूर्य से और परब्रह्म परमात्मा से इसका सम्बन्ध होने के कारण "सविता" नाम से विश्वविख्यात है।

अपनी मनोऽभिलषित कार्य सिद्ध करने के लिए कुछ विधिएं प्रक्रियाएं हैं जिनके अनुसार विधि-विधान करने से सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

गायत्रीतत्वदर्शिका के लिए प्रेरणा-

जम्मू से 35 कि.मी. दूर मथवार नाम का एक पवित्र, शक्तिशाली, भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला, गायत्री के परम उपासक परम तपस्वी ब्रह्मलीन योगिराज श्री बाबा बल्लो जी का स्थान है जिस स्थान पर जाकर श्रद्धाभाव से मस्तक नवाकर हजारों भक्त अपनी मनोकामनाओं को सिद्ध करते हैं। इसी स्थान पर बाबा बल्लो जी के वंशज परम आराधक तपस्वी आदरणीय पं. यशपाल शर्मा जी, वर्तमान में इस स्थान के मुख्य पूजक व संचालक हैं, यह गायत्री मंत्र के अनुष्ठान करवाते रहते हैं। इस स्थान पर गायत्री उपासक योगीराज बाबा वल्लो जी का आशीर्वाद भक्तों को सदैव प्राप्त होता है। और भक्तों को इस आशीर्वाद की पूर्ण अनुभूति भी होती है। इन्हीं के द्वारा "गायत्री तत्व दर्शिका" पुस्तक सम्पादन करने की प्रेरणा हुई और यथाशक्ति गायत्री उपासकों के लिए इस पुस्तक का सम्पादन कर विक्रमी संवत् 2073 माघ शुक्ल पञ्चमी, बुधवार तदनुसार सन् ई. 2017-1 फरवरी को बाबा वल्लो जी के चरणों में समर्पित कर दी जाएगी।

आभार प्रदर्शन-

इस "गायत्री तत्व दर्शिका" पुस्तक को सम्पादित करने के लिए, मैंने जिन पुस्तकों से सहायता ली हैं, उनका आभार प्रदर्शित करना मेरा प्रथम कर्तव्य है, उनके बिना पुस्तक सम्पादन करना दुरूह था। अतः इस पुस्तक का सम्पादन करने के लिए शान्तिकुञ्ज हरिद्वार से प्रकाशित "गायत्री महाविज्ञान" पुस्तक के लेखक, वेदमूर्ति तपोनिष्ठ स्व. पं. श्री रामशर्मा आचार्य जी का जिन्होंने गायत्री का प्रचार प्रसार करने के लिए निरन्तर अथक परिश्रम किया है उनको तथा "गायत्री रहस्यम्" पुस्तक के सम्पादक पं. अशोक कुमार गौड वेदाचार्य जी का एवं "गायत्री रहस्यम्" पुस्तक के लेखक "आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्र जी का, प्लेक्सोप्रिंट गोरखपुर द्वारा मुद्रित,

व्यवस्थापक 'कल्याण'–कार्यालय, पत्रालय गीताप्रेस गोरखपुर के "शक्ति उपासना अङ्क" के सम्पादकों का और गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित एवं मुद्रित महर्षि वेदव्यास प्रणीत सन्ध्योपसन विधि "श्रीमद्देवी भागवतमहापुराण" के सम्पादकों का, गीताप्रेस गोरखपुर के द्वारा प्रकाशित सम्पादित म.म.पं. विद्याधर शर्मा, गौड वेदाचार्य जी का तथा अन्य जिन ग्रन्थों से सहायता ली है उनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूं। जिन्होंने गायत्री उपासकों के लिए पुस्तकों की रचना तथा सम्पादन कर गायत्री उपासना मार्ग को सुगम बनाया है।

यद्यपि इस पुस्तक में गायत्री से सम्बन्धित बहुत से अंशों का समावेश नहीं हुआ है क्योंकि अधिक विस्तार करने पर साधारण जन तक गायत्री मंत्र मंत्रार्थ पहुंचाना कठिन हो जाता तथापि कुछ अंशों में, कुछ जिज्ञासाएं शान्त करने का प्रयास किया गया है। उसमें यदि किसी प्रकार की अनवधानता हुई हो तो सम्पादक को उसके लिए सूचित करें ताकि अग्रिम प्रकाशन में उसको ध्यान में रखा जा सके। इसी के साथ मुद्रक डी.वी. प्रिंटर्स, दिल्ली का भी साभार व्यक्त करता हूँ क्योंकि यथासमय पुस्तक मुद्रित करके प्रकाशक के हाथों में समर्पित कर दी।

इस पुस्तक के सम्पादन के लिए यहीं कहीं से जो जो सहायता प्राप्त की है वे सभी इस ज्ञान यज्ञ प्रचार प्रसार में आशीर्वाद के पात्र हैं।

निवेदन–

आप सभी से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि ब्रह्मलीन योगीराज बावा बल्लो जी का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए अपने प्रत्येक कष्ट को दूर करने के लिए अपनी कार्यसिद्धि के लिए गायत्री जप 3–2–1 हजार या 1 माला जप अवश्य करें। उसके बाद इसके प्रभाव को आप स्वयं अनुभव करेंगे।

ब्रह्मादयोऽपि सन्ध्यायां तां ध्यायन्ति जपन्ति च।
वेदा जपन्ति तां नित्यं वेदोपास्या ततः स्मृता॥

ब्रह्मादि देवता भी सन्ध्या में जिसका ध्यान करते हैं, जिसका जप और ध्यान वेद भी करते हैं। वह पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्गपर्यन्त जो सविता (प्रकाश स्वरूप सूर्य) जो सम्पूर्ण श्रुतियों में प्रसिद्ध है वह प्रकाशमान विश्व–स्रष्टा, परमात्मा हमारी बुद्धियों को सत्कार्य में प्रेरित करें।

अन्त में, उसी आद्या को, ब्रह्म स्वरूपिणी को भगवती वैष्णावी के गायत्री, सावित्री, सरस्वती स्वरूपों को कोटिशः प्रणाम

–डॉ. विश्वमूर्ति शास्त्री

विषयानुक्रमणिका

परिशिष्ट

गायत्री तत्त्व दर्शिका

ॐ मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखै स्तीक्ष्णै
र्युक्तामिन्दु निबद्ध-रत्न मुकुटां तत्वार्थवर्णात्मिकां
गायत्रीं वरदाऽभयाङ्कुश कशां शूलं कपालं गुणं
शङ्खंचक्रमथारविन्द युगलं हस्तैर्वहन्तीम्भजे।।

गायत्री मन्त्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

गायत्री मन्त्र का महत्त्व

चारों वेदों के सारभूत गायत्री मंत्र को प्रायः सभी विद्वान् जानते हैं, यह मन्त्र ही ब्रह्म और जीवात्मा की एकता का प्रतीक है।

सम्पूर्ण श्रुति, स्मृति, इतिहास पुराणादियों का यही लक्ष्य है कि सांसारिक दुःख की निवृत्ति तथा शाश्वत आनन्द की प्राप्ति हो, यह केवल गायत्री मन्त्र द्वारा ही फलीभूत हो सकता है।

गायत्री मन्त्र का जप करने से मल, विक्षेप और आवरण का नाश हो जाता है। यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि, इत्यादि गीता वाक्यानुसार, यज्ञों मैं जप यज्ञ हूँ। अर्थात् जप यज्ञ सभी यज्ञों से श्रेष्ठ है।

एक वेद को सुविधा के लिए चार भेदों में विभक्त किया गया है।

1. ऋक्-कल्याण, 2. यजु-पौरुष, 3. साम-क्रीडा, 4. अथर्व-अर्थ

ऋक्-धर्म, यजुः मोक्ष, साम को काम, अथर्व को अर्थ कहा है।

2. ब्रह्मा को चतुर्मुख इसलिए कहा है कि वे एक मुख होते हुए भी चार प्रकार की ज्ञान-धारा का निष्क्रमण करते है। भगवान् विष्णु की चार भुजाएं यही हैं।

इन विभागों को स्वेच्छापूर्वक विभक्त करने के लिए चार आश्रम और चार वर्णों की व्यवस्था की गई। बालक-क्रीडावस्था में-तरुण-अर्थावस्था में, वानप्रस्थ-पौरुषवस्था में, और सन्यासी कल्याणवस्था में रहता है।

ब्राह्मण ऋक् है, क्षत्रिय-यजुः है, वैश्य-अथर्व है और साम शूद्र है। इस प्रकार चार प्रकार से वर्गीकरण किया गया है।

गायत्री माता है तो चार वेद इसके पुत्र हैं। जिस प्रकार एक वट् बीज के गर्भ में एक वट् वृक्ष छिपा होता है। उसी प्रकार ब्रह्मा ने चार वेदों की रचना से पूर्व, चौबीस अक्षर वाले गायत्री मन्त्र की रचना की, एक मन्त्र के एक-एक अक्षर में सूक्ष्म तत्त्व समाहित हैं, जिनके पल्लवित होने पर चार वेदों की शाखा प्रशाखाएं उत्पन्न हो गई।

अष्टादशसु विद्यासु मीमांसाऽतिगरीयसी।
ततोऽपि तर्कशास्त्राणि पुराणं तेभ्य एव च।।

ततोऽपि धर्मशास्त्राणि तेभ्यो गुर्वी श्रुतिर्द्विज।
ततोऽप्युपनिषच्छ्रेष्ठा गायत्री च ततोऽधिका।।

दुर्लभा सर्वमन्त्रेषु गायत्री प्रणवान्विता।।

अर्थात्–ब्रह्मा ने तीन ऋचा वाली गायत्री के तीनों चरण, सारभूत तीनों वेदों से निकाले हैं।

अठारह विद्याओं में मीमांसा अति श्रेष्ठ है उससे भी उत्तरोत्तर न्यायशास्त्र, उससे भी पुराण, धर्मशास्त्र, वेद, उपनिषद उस से भी गायत्री मन्त्र श्रेष्ठ है, उस से भी प्रणवयुक्त गायत्रीमंत्र सभी मंत्रों में दुर्लभ है।

ब्राह्मण के लिए त्रिकाल सन्ध्या (त्रिकाल गायत्री) की उपासना आवश्यक है वृहद् सन्ध्या भाष्य में कहा है कि–

न ब्राह्मणो वेदपाठान्न शास्त्र पठनादपि।
देव्या स्त्रिकालमभ्यासाद् ब्राह्मणः स्याद्विजोऽन्यथा।।

अर्थात्–केवल वेदशास्त्र के पढने से ब्राह्मण नहीं हो हो जाता, अपितु त्रिकाल सन्ध्या गायत्री की उपासना करने से ही ब्राह्मण कहा जाता है, ऐसा न होने पर द्विज ही रहता है। द्विज शब्द का अर्थ [द्वाभ्यांजातः द्विजः] अर्थात् माता पिता से जन्म लेने के बाद एकज और गायत्री मंत्र से गुरू के द्वारा दीक्षा लेने पर द्विज कहलाता है, जिससे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य द्विज कहलाते हैं।

गायत्री महत्व

नाग्निर्दहति काष्ठानि सावित्री यत्र पठ्यते।
न तत्र बालो म्रियते न च तिष्ठन्ति पन्नगाः।।

अर्थात्–जहां गायत्री का जप किया जाता है उस घर में विना कारण काठ को

(लकड़ी) को आग नहीं लगती और वहाँ बच्चों की मृत्यु नहीं होती, और न वहाँ पर सांप ठहरते हैं।

महाभारत में यह भी कहा है कि गायत्री का जप करने वाला केवल अपना ही कल्याण नहीं करता, अपितु प्रत्येक वर्ण और प्रत्येक आश्रम में वह सब प्रकार से शान्ति स्थापित करता है। "या गायत्री तद् ब्रह्मैव, ब्रह्मवै गायत्री - ब्रह्म स्वरूप होने के कारण गायत्री को ब्रह्म विद्या कहा है। गायत्री को भगवान् विष्णु की आदिशक्ति कहा है-जैसे "आदि शक्तिमुपासीत गायत्रीं वेद मातरम्"। ज्ञेया शक्ति रियं विष्णोः।

तीनों वेदों में विद्यमान यह मंत्र तथा अथर्ववेद में-गायत्र्युपनिषद-सभी साधकों का इष्ट साधक है।

सम्पूर्ण यज्ञों में नाना प्रकार की विधिएं हैं जिनको सम्पन्न करना प्रत्येक मानव के वश की बात नहीं है, परन्तु जप यज्ञ में द्रव्य त्याग आदि नहीं होते केवल ध्यान की ही आवश्यकता रहती है, जपों में भी-

सर्वेषां जप सूक्तानां गायत्री परमो जपः।

पाराशर मुनि के इस वचनानुसार सभी जपों में गायत्री जप सर्व श्रेष्ठ है, विना अर्थ ज्ञान के ॐकार का जप करना, विना अर्थ ज्ञान के अन्य मंत्रों का जप, वेद और धर्मशास्त्रों का अध्ययन करना भूसी तथा आटे से निकले हुए तुष समूह को कूटने के समान है। इसलिए गायत्री मंत्र का अर्थ ज्ञान भी परमावश्यक है।

श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है कि "गायत्री छन्दसामहम्" अर्थात् छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूँ। "गायत्री छन्दसां मातेति" महानारायणोपनिषद का यह वाक्य इस अर्थ को प्रकट करता है कि गायत्री वेदों का आदि कारण है-

नास्ति गंगा समं तीर्थं न देवः केशवात् परः।
गायत्र्यास्तु परं जप्यं न भूतो न भविष्यति।। वृ.यो.याज्ञ अ. 10-2-76

इस प्रमाण से भी यही प्रतीत होता है कि गायत्री मंत्र से परे न कोई जप हुआ है न कोई होगा।

इत्यादि वेदवाक्यों के अनुसार यह प्रतीत होता है कि गायत्री मन्त्रार्थ रूप जो तेजोयम पुरुष, सूर्य मण्डल तथा हमारे हृदय कमल में विराजमान है उसका चिन्तन करने से विक्षेप का नाश होता है।

इस प्रकार तेजोमय पुरुष के लक्ष्य स्वरूप अर्थात् ब्रह्मात्मैक्य का जो ज्ञान होता है उससे आवरण का नाश होता है इस प्रकार मोक्ष के तीनों-मल, विक्षेप तथा आवरण -प्रतिवन्धकों का नाश होता है।

गायत्री चैव वेदाश्च ब्रह्मणा तोलिता पुरा।
वेदेभ्यश्च सहस्त्रेभ्यो गायत्र्यति गरीयसी। व.पा.स्म. 5/16

इस स्मृति वचनानुसार पूर्व काल में ब्रह्मा ने गायत्री और वेदों को तोला तो सभी वेदों से भी गायत्री का पलड़ा भारी रहा। गायत्री मंत्र के जप से पातक उपपातकादियों का नाश होता है। "आसावादित्यो ब्रह्म" अर्थात् आकाश मण्डल में जो सूर्य उदय होता है तथा अपने प्रकाश से अन्धकार का नाश करता है वही ब्रह्म है। "सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च" इस शुक्ल यजुर्वेद के वाक्यानुसार सूर्य भगवान् चर तथा अचर सृष्टि की आत्मा हैं।

जप कर्ताओं के लिए यह आवश्यक है कि जप करते समय, "जपस्तदर्थ भावनात्" के अनुसार मन्त्र के अर्थ का भी चिन्तन करें-अर्थ के स्मरण से सब पाप नष्ट हो जाते हैं। मन्त्र के अर्थ का ज्ञान ही भक्ति और विश्वास को पैदा करता है।

भू र्भुवः स्वः, यह तीन महा व्याहृतियां तथा चौबीस अक्षर वाली गायत्री चारों वेद स्वरूप है। निःसन्देह ओंकार सर्व रूप है।

जिस प्रकार फूलों का सार-शहद, दूध का सार-घी, रस का सार-दूध है, उसी प्रकार वेदों का सार-गायत्री मन्त्र कहा गया है।

जिस प्रकार अठारह विद्याओं में मीमांसा अति श्रेष्ठ है, उससे भी न्याय शास्त्र, न्यायशास्त्र से पुराण, पुराणों से धर्मशास्त्र, धर्मशास्त्र से वेद सर्वश्रेष्ठ हैं। उससे भी गायत्री मन्त्र प्रणव (ओंकार से) युक्त दुर्लभ है।

गायत्री से परे पाप कर्मों के दोष निरासार्थ कोई मंत्र नहीं है इसलिए प्रणव तथा महाव्याहृति सहित गायत्री का जप करें। जैसे सम्वर्तस्मृति में कहा है कि-

गायत्र्यास्तु परान्नास्ति शोधनं पाप कर्मणाम्।
महाव्याहृति संयुक्तां प्रणवेन च संजपेत्।।

यही गायत्री मंत्र उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार में उपदेश किया गया गुरु मंत्र कहा जाता है। इसी मंत्र को सूर्यवंशी तथा चन्द्रवंशी क्षत्रिय गण पवित्र होकर जपा करते थे। महाभारत के अनुशासन पर्व में युधिष्ठिर के प्रति भीष्म ने कहा है कि सूर्य और चन्द्रवंश के सभी सदस्य तथा रघुवंशी तथा कुरुवंशी पवित्र होकर सर्वदा परम गति- दायिनी सावित्री को जपा करते हैं। श्री रामचन्द्र जी का किया गया सन्ध्योपासन (गायत्री मंत्र जप) वाल्मीकीय रामायण में कई स्थानों पर वर्णित किया गया है।

सूत संहिता के यज्ञ वैभव खण्ड में **"ब्रह्म गायत्रीति, ब्रह्मवै गायत्री"** के अनुसार ब्रह्म ही गायत्री है। शतपथ ब्राह्मण में "गायत्री-परमात्मा" कहकर गायत्री को

ही परमात्मा कहा गया है।

छान्दोग्य-उपनिषद् में-"गायत्री वा इदं सर्वभूतं यदिदं किञ्च" कहकर। यह संसार जो कुछ है वह सब गायत्री रूप है।

ब्रह्मर्षि विश्वामित्र ने कहा है कि–

देवस्य सवितुस्तस्य धियो योनः प्रचोदयात्।
भर्गो वरेण्यं तद्ब्रह्म धीमहीत्यथ मुच्यते।।

अर्थात्–उस प्रकाशमान सविता का ध्यान करने योग्य जो तेज हमारी बुद्धि को प्रेरित करता है वह ब्रह्म है उसका मैं ध्यान करता हूँ।

छान्दोग्य-उपनिषद में कहा है कि–

"गायत्री प्रत्यग्ब्रह्मैक्य वोधिका"।

अर्थात्-गायत्री जीवात्मा और ब्रह्म की एकता का बोधक है।

वृहत्सन्ध्याभाष्य में कहा है कि-

गायत्र्येवपरो विष्णुर्गायत्र्येव परः शिवः।
गायत्र्येव परो ब्रह्मा गायत्र्येव त्रयी यतः।।

अर्थात्-गायत्री ही दूसरा विष्णु, दूसरा शिव और दूसरा ब्रह्मा है क्योंकि गायत्री तीनों देवों का स्वरूप है।

व्यास के अनुसार प्रातः मध्याह्नादि काल भेद से गायत्री के नाम

गायत्री नाम पूर्वाह्ने सावित्री मध्यमे दिने।
सरस्वती च सायाह्ने सैव सन्ध्या त्रिषु स्मृता।।

अर्थात्-प्रातः काल में गायत्री, मध्याह्न (दोपहर में) सावित्री तथा सायङ्काल में सरस्वती नाम हैं-वही गायत्री तीनों सन्ध्याओं में वर्णित है।

गायत्री मंत्र एक चमत्कार है, विविध विधान के साथ किया गया जप-पुरश्चरण मनोऽभिलषित सिद्धियों को देने वाला है। यह गायत्री मन्त्र कल्पवृक्ष स्वरूप है, जिन-जिन कामनाओं को लेकर यज्ञोपवीत विधि विधान से धारण कर मन, वाणी, वचन, स्थान, पवित्र वस्त्र, पवित्र सामग्री से युक्त होकर कार्य सिद्धि के लिए निर्धारित जप-संख्या के अनुसार कार्य प्रारम्भ करें निश्चित ही साधक सफलता को प्राप्त करेंगे।

शास्त्रों में गायत्री महत्व के विषय में अत्यन्त विस्तार के साथ कहा गया है उस सारे महत्व का यहां पर प्रतिपादित करना असम्भव है अतः गायत्री महत्व के सारभूत शब्दों के द्वारा मां गायत्री के प्रति साधक, साधना को सिद्ध करने के लिए अपना तथा जन साधारण का कल्याण करने के लिए सिद्धासन होकर प्रतिज्ञा पूर्वक उपासना प्रारम्भ करें। गायत्री महत्व के विषय में-मनुस्मृति में, अत्रिस्मृति में, वृ.सन्ध्या भाष्य में, सूत संहिता के यज्ञ वैभव खण्ड में गायत्री तत्व में, सूर्योपनिषद में, छान्दोग्योपनिषद् में, शाङ्करभाष्य में, कूर्मपुराण में, ऋषि ऋंग में, देवीभागवत पुराण में वर्ष 61 शक्ति उपासना अंक में, गायत्री पञ्चाङ्गादि ग्रन्थों में विस्तार से देखा जा सकता है।

गायत्री शब्द का अर्थ

"तद्यद्गयाँ स्त्रायते तस्माद् गायत्री"।
गायत्तं त्रायते यस्मात् पातकादुप पातकात्।

महर्षि व्यास जी के इस वचनानुसार जो गायत्री का गान (जप) करता है उसकी पातक, महापातक तथा उप पातक से रक्षा होती है-"गय" नाम प्राण का है, प्राणों की रक्षा करने से इस का नाम गायत्री है।

"गायत्री प्रत्यग्ब्रह्मैक्य बोधिका"

गायत्री जीवात्मा और ब्रह्म की एकता का बोधक है।

"गायत्री गायतेः स्तुति कर्मण इति"

निरुक्त के निघण्टुक काण्ड के अनुसार-गायत्री नाम गान और स्तुति कर्म में है।

व्यास वचनानुसार, प्रकाश करने के कारण, संसार उत्पन्न करने के कारण, उसी गायत्री का नाम सावित्री हुआ और वाणीरूप होने से सरस्वती हुआ। जैसे-

प्रतिग्रहान्नदोषाच्च पातका दुपपातकात्।
गायत्री प्रोच्यते तस्माद्गायन्तं त्रायते यतः॥

अर्थात्-जिस कारण से जप करने वाले की प्रतिग्रह, अन्नदोष पातक और उप पातकों से रक्षा करती है इसीलिए गायत्री कही जाती है।

सावित्री द्योतनात्सैव सावित्री परिकीर्तिता।
जगतः प्रसवितृत्वात् वाग्रूपत्वात् सरस्वती॥

प्रकाश करने से और संसार के उत्पन्न करने के कारण उसी गायत्री का नाम

सावित्री हुआ और वाणी रूप होने से सरस्वती हुआ।

"प्राणा गया इति प्रोक्ता स्त्रायते तानथापि वा।"

भरद्वाज जी के अनुसार गय नामक प्राण का है प्राणों की रक्षा करने के कारण गायत्री नाम हुआ। एतरेय ब्राह्मण में भी कहा है कि-

"गयान् प्राणान् त्रायते सा गायत्री"।

अर्थात्-जो गय, प्राणों की रक्षा करती है वह गायत्री है।

24 अक्षरों से निर्मित होने के कारण तथा गायत्री छन्द होने के कारण गायत्री नाम है।

गायत्री मंत्र जपने के अधिकारी

जिसका उच्चारण शुद्ध हो, जो सदाचारी हो, जो सत्यरूपी धर्म पर-विराजमान हो अर्थात् सत्य ही जीवन में पूजापाठ हो, मांस मदिरादि दोषों से दूर हो, जिसके संस्कार ईश्वर के प्रति सुदृढ़ हों विधि पूर्वक यज्ञोपवीत संस्कार हुआ हो-जो सुयोग्य गुरु से दीक्षित हो ऐसे साधक के पास मां गायत्री शीघ्र कृपा करके उसकी इच्छा को पूर्ण करती है।

ऊष्णीषी कंचुकी नग्नो मुक्तकेशो मलावृतः।
अपवित्र करोऽशुद्धो विलपन्न जपेत्क्वचित्॥

अर्थात्-पगड़ी बांधकर-अङ्गरखा (कमीज) पहनकर नग्न अवस्था में, केश खुले हुए, गुलूवन्द (मफलर) बांधकर, अपवित्र हाथ से अशुद्ध दशा में तथा बोलते हुए जप न करें।

"शिरः प्रावृत वस्त्रेण ध्यानं नैव प्रशस्यते।"

इस नियम के अनुसार वस्त्र से शिर आच्छादित होने के कारण ध्यान प्रशस्त नहीं माना गया है। इस में यदि किसी की परम्परा वस्त्र से ढकने की हो तो विचार किया जा सकता है।

गायत्री का ध्यान-जप-पुरश्चरण, उपासना सफेद वस्त्र पहनकर प्रशस्त मानी गई है।

वर्णाश्रमों के लिए गायत्री जपने के भेद बतलाए हैं। वर्तमान कालिक व्यवस्थाओं को देखते हुए पृथक्-पृथक् वर्णाश्रमों के पचरे में न पड़कर मनुस्मृति के अध्याय दो श्लोक इक्यासी के अनुसार गायत्री मंत्र का जप उचित प्रतीत होता हुआ

समयानुसार भी है-जिस में पूर्व प्रतिपादित गायत्री मंत्र जपने के नियमों का सुचारू रूप से होना आवश्यक है।

गायत्री जप विधानम्

अपरार्क शाखान्तर मन्त्र निरूपण खण्ड में कहा है कि-

यद्वा सर्वेऽपि गायत्रीं तत्राद्यो ब्रह्म संज्ञिताम्।
विड् वैष्णवीं नृपो रौद्रीं सर्वे वा ब्रह्म संज्ञिताम्॥

अर्थात्-सभी गायत्री छन्दवाला मंत्र जपें या ब्रह्म गायत्री, विष्णु गायत्री, रुद्र गायत्री मन्त्र का जप करें।

मनु ने कहा है कि-

ॐकार पूर्विकास्तिस्रो महाव्याहृतयोऽव्ययाः।
त्रिपदा चैव सावित्री विज्ञेयं ब्रह्मणोमुखम्॥

अर्थात्-ओंकार पूर्वक तीनों अव्यय व्याहृतियों सहित त्रिपदा गायत्री ब्रह्ममुख जानने योग्य है। लघ्वाश्वलायन में कहा है कि-प्रणव (ओंकार) पूर्वक तीनों व्याहृतियों (भूः भुवः स्वः) सहित ब्रह्मरूपिणी गायत्री को सदैव जपें।

कूर्मपुराण में कहा है कि-

ओंकारमादितः कृत्वा व्याहृति स्तदनन्तरम्।
ततोऽधीयीत सावित्रीमेकाग्रः श्रद्धयान्वितः॥

अर्थात्-श्रद्धा युक्त एकाग्र मन से प्रारम्भ में ओंकार, तदनन्तर महाव्याहृति, उसके बाद गायत्री (सावित्री) मन्त्र का जप करें।

व्यास ने भी कहा है कि-

"प्रणव व्यहृतियुतां गायत्रीं वै जपेत्ततः।"

प्रणव व्यहृति युक्त गायत्री को जपें।

वसिष्ठ ने कहा है कि गृहस्थ को एक प्रणव (ओंकार युक्त) गायत्री मंत्र का जप करना चाहिए। जैसे-

"तत्रैक प्रणवाकार्या गृहस्थैर्जप कर्मणि"।

स्मृति चन्द्रिका में कहा है कि-

"गृहस्थवत्तु जप्तव्या सदैव ब्रह्मचारिभिः।"

अर्थात्-ब्रह्मचारियों को भी गृहस्थों की तरह सदैव गायत्री मन्त्र जपना चाहिए। याज्ञवल्क्य ने अन्त में ओंकार के प्रयोग का निषेध किया है।

वानप्रस्थादियों के लिए जप प्रकार

व.यो.याज्ञ. में लिखा है कि-

ओंकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
गायत्री प्रणवश्चान्ते जपो ह्येवमुदाहृतः॥

सर्वप्रथम ओंकार का उच्चारण करके फिर भूर्भुवः स्वः तदनन्तर त्रिपदा गायत्री और अन्त में ओंकार सहित गायत्री का जप वानप्रस्थादियों के लिए कहा गया है। जैसे-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि,
धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ। (शु.यजुर्वेद अध्या. 36-मन्त्र 3)

गायत्री के साथ प्रणव (ओंकार) लगाने का कारण

"गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओंकारः प्ररुषः स्मृतः।
ताभ्यामुभय संयोगात् जगत्सर्वं प्रवर्तते॥"

अर्थात्-गायत्री को प्रकृति जानना चाहिए। ओंकार को पुरुष कहा गया है। दोनों के संयोग से यह सम्पूर्ण संसार चलता है।

ॐकार महत्व

औशनस स्मृति में कहा है कि-

ओंकारस्तु परंब्रह्म गायत्री स्यात्तदक्षरम्।
एवं मन्त्रो महायोगः साक्षात्सार उदाहृतः॥

अर्थात्-ओंकार परब्रह्म है और गायत्री उसका अक्षर है इस प्रकार यह मन्त्र साक्षत् सार कहा है। इसी मंत्रत्व शक्ति की प्राप्ति के लिए सभी मंत्रों में, सभी देवताओं के सहस्र नामों में, एक सौ आठ नामों में, वास्तु नवग्रह, योगिनी क्षेत्रपाल तथा सर्वतोभद्र मण्डलों के अधिष्ठात्री देवों के पूजन मन्त्रों के प्रारम्भ में ओंकार का प्रयोग किया जाता है जिससे मन्त्रों के मंत्रत्व में, देवों के देवत्व में शक्ति आ जाती है इसलिए ॐ रहित मंत्र का प्रयोग देवताओं के नाम-मंत्र का जप-पूजा आदि ओंकार के विना नहीं करनी चाहिए। जिस ओंकार के संयोग से सभी मंत्रों में, मंत्रत्व शक्ति आ जाती है उसके विषय में यथा संभव लिखित प्रकार से कहा जा रहा है। अकार-

उकार-मकार और भूर्भुवः स्वः को ब्रह्मा ने तीनों वेदों से सार रूप प्रकट किया है-

मनुस्मृति में कहा है कि-

अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापतिः।
वेदत्रयान्निरदुहद् भूर्भुवः स्वरितीति च॥

ओंकार के महत्व को बतलाते हुए शास्त्रों में कहा गया है कि वेदों का सार उपनिषद् हैं, उपनिषदों का सार गायत्री, गायत्री का सार तीनों व्याहृति हैं और तीनों व्याहृतियों का सार ओंकार कहा गया है। ओंकार को त्रि मात्र ब्रह्म कहते हैं। त्रिमात्र ब्रह्म की उपासना में जो तल्लीन रहता है वह परब्रह्म को प्राप्त होता है।

तैत्तरीयोपनिषद में कहा है कि "ओमिति ब्रह्म" अर्थात् ओंकार ब्रह्म है।

तैत्तरीयोपनिषद में कहा है कि-

स ओमित्येतदक्षरमपश्यद्द्विवर्णं चतुर्मात्रम्।
सर्वव्यापि सर्वविम्बयातयाम ब्रह्म॥

ब्रह्मा ने ॐ इस अक्षर को देखा जो दो वर्ण चार मात्रा वाला सर्वव्यापी नाश रहित ब्रह्म है।

पाशुपतब्रह्मोपनिषद में हंस (परमात्मा) और प्रणव (ॐ) में भेद नहीं है, यह कहकर-ओंकार को ही परमात्मा कहा गया है।

परब्रह्मोपनिषद् में, "**प्रणव हंसः पर ब्रह्मेति**" कहकर प्रणव और हंस यह दोनों परब्रह्म है।

छान्दोग्योपनिषद् में, "**ओंकार एवेद ꣳ सर्वम्**" कहकर - सम्पूर्ण सृष्टि को ओंकार रूप कहा है।

माण्डूक्योपनिषद् में-भूत, भविष्य तथा वर्तमान सबको ओंकार रूप कहा है।

ओंकार के विषय में, मैत्र्युपनिषद् में कहा है कि-

यदमूर्तं तत्सत्यं तद्ब्रह्म यद्ब्रह्म तज्ज्योतिर्यज्ज्योतिः
स आदित्यः सा एव ओमित्येतदात्माप्यभवत्।

अर्थात्-जो रूप रहित है वह सत्य है, वही ब्रह्म है, जो ब्रह्म है वह प्रकाश स्वरूप है, जो प्रकाश स्वरूप है वह सूर्य है, वही सूर्य ॐकार है, वही आत्मा है। पातंजल योग दर्शन में कहा है कि, "**तस्य (ईश्वरस्य) - वाचकः प्रणवः**" अर्थात् प्रणव उस ईश्वर का बोधक है।

छान्दोग्य परिशिष्ट में ओंकार के महत्व को बताते हुए कहा है कि-

यदोंकारमकृत्वा किंचिदारम्यते तद्वज्री भवति।
तस्माद् वज्रभयाद्भीतमोंकारं पूर्व मारभेदिति॥

अर्थात्-ओंकार का उच्चारण किए विना जो कुछ श्रौतादि यज्ञ यागादि कार्य प्रारम्भ किया जाता है-वह वज्रवत् हो जाता है, निष्फल हो जाता है। अतः ओंकार का उच्चारण सभी कार्यों में यज्ञ यागादि अनुष्ठानों में परमावश्यक है। ओंकार, प्रणव, सर्वव्यापी, अनन्त, तार, शुक्ल, वैद्युत, हंस, तुर्य, परब्रह्म इन सबको ओंकार नाम से समझें। यह सभी ओंकार के ही पर्यायवाची हैं।

गोपथब्राह्मण में ओंकार के विषय में कहा है कि आप्लृ-व्याप्तौ तथा अव-रक्षणे, इन दोनों धातुओं से, ओंकार का अर्थ जो सर्वत्र व्याप्त है, जो सब की रक्षा करने वाला है। अतः ओंकार सर्वव्यापी है। व्याकरण के अनुसार अव-धातु, रक्षा, प्रकाश, पालन, हिंसा, वृधि आदि अर्थों में प्रयुक्त है। अतः चौदह भुवन की रक्षा करने के कारण ॐकार नाम है।

वृहत्संहिता में कहा है कि "**अवति संसार सागरादिति ओ३म्**" अर्थात् संसार सागर से जो रक्षा करता है उसका नाम ॐ है।

प्र-णु-स्तुतौ-प्रकर्षेण नूयते स्तूयते आत्मा स्वेष्ट देवता अनेनेति प्रणवः।

प्र-उपसर्ग पूर्व 'णु' धातु स्तुति करने के अर्थ में है अच्छी तरह से आत्मा तथा इष्ट देवता की जिससे स्तुति की जाय उसको प्रणव कहते हैं।

वृ.यो. याज्ञवल्क्य में-अ, उ, म यह तीनों अक्षर ब्रह्मा, विष्णु रुद्र यह त्रिदेवता कहे गए हैं।

संसार के सभी आवश्यक तत्व ॐकार में समाहित

लिखित प्रकार से अ, उ, म तथा अर्धमात्रा में प्रायः संसार के सभी आवश्यक तत्व समाहित हो गए हैं।

मात्रा भेद			
1	2	3	4
अ	उ	म	अर्धमात्रा
रक्त	कृष्ण	कपिल	शुद्धस्फटिक सन्निभ
ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद

भूः	भुवः	स्वः	महाव्याहृतियां
गायत्री	त्रिष्टुभ	जगती	अनुष्टुप
भूमिलोक	अन्तरिक्षलोक	सुरलोक	परलोक
अग्नि	वायु	आदित्य	सर्वदेव
रजोगुण	सत्वगुण	तमोगुण	निर्गुण
ब्रह्मा	विष्णु	शिव	निराकार
विराट्	हिरण्यगर्भ	ईश्वर	ब्रह्म
विश्व	तैजस	प्राज्ञ	कूटस्थ
बहि प्रज्ञ	अन्तः प्रज्ञ	घन प्रज्ञ	त्रिप्रज्ञरहित
स्थूल शरीर	सूक्ष्म शरीर	कारण शरीर	अशरीर
जाग्रत्	स्वप्न	सुषुप्ति	तुरीय
मनआदि 14	अन्तःकरण 4	चित्त	कारणरहित
वाचमध्य	प्राणमध्य	मनअध्या०	ज्योतिरध्यात्म
ब्रह्मचर्य	गृहस्थ	वानप्रस्थ	संन्यास
धर्म	अर्थ	काम	मोक्ष
ब्रह्मलोक	विष्णुलोक	शिवलोक	अनामयपद
प्राप्ति	प्राप्ति	प्राप्ति	प्राप्ति

गायत्री मन्त्र तथा अर्थ ज्ञान के लिए अन्वय

ओ३म् भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्।।

सवितुः देवरूय यद्वरेण्यं भर्गः नः धियः प्रचोदयात् (प्रेरयति) तत् धी महि। कीदृशं तत्, भूः भुवः स्वः। पुनः कीदृशं, ओम्।

अथवा

सवितुः देवस्य यद्वरेण्यं भर्गः धीमहि, तत् नः धियः प्रचोदयात् (प्रेरयेत्) कीदृशं तत् भूर्भुवः स्वः। पुनः कीदृशं, ओम्।

अथवा

यः (सविता) नः धियः प्रचोदयात् (प्रेरयति) तत्, तस्य सवितुः देवस्य वरेण्यं भर्गः धीमहि, तत्कीदृशम्-भूर्भुवः स्वः पुनः कीदृशम्, ओम्।

गायत्री मन्त्र के तीन पाद हैं जैसे-

प्रथम पाद - तत्सवितुर्वरेण्यं।

दूसरा पाद - भर्गो देवस्य धीमहि।

तीसरा पाद - धियो यो नः प्रचोदयात्।

गायत्री मंत्र के चौबीस अक्षर हैं परन्तु इन तीनों पादों में से प्रथम पाद में सात अक्षर हैं, द्वितीय एवं तृतीय पाद में आठ-आठ अक्षर हैं। इस गायत्री मंत्र में चौबीस अक्षर संख्या कैसे पूरी होगी?

इस प्रश्न का समाधान करते हुए-मार्कण्डेय स्मृति में कहा है कि-

अत्र यः सप्तमो वर्णः सतु वर्ण द्वयात्मकः।
णिकारश्च यकारश्च द्वावित्येव मनीषिभिः॥
ज्ञात्वा तु वैदिकैः सर्वैः जप्योवेदे यथैव सा॥

अर्थात्-सातवां वर्ण जो "ण्य" है, उसे गिनते समय दो वर्ण गिनना चाहिए। इस प्रकार आठ अक्षर पूरे होकर चौबीस अक्षर बन जाते हैं-("ण्य" को णि+य समझना चाहिए परन्तु जप में उच्चारण के समय 'ण्य' ही कहना चाहिए।) शास्त्रों ने जप के समय, भूर्भुवः स्वः, इन तीनों का प्राणायाम के समय सात महाव्याहृतियों को जोडने का आदेश दिया है-महाव्याहृतियों से पहले ओं को जोड़ना भी आवश्यक है।

संसार के सभी प्राणी सुख की प्राप्ति तथा दुःखों से छुटकारा चाहते हैं, इस सुख की प्राप्ति के लिए निरन्तर विविधविध कार्य करते रहते है, एक ही काम से सुख की प्राप्ति और दुःख से निवृत्ति न होने के कारण अन्यान्य कार्यों को करने लगते हैं परन्तु मनोऽभिलषित सुख प्राप्ति तथा दुःख की निवृत्ति फिर भी हो नहीं पाती।

सही मायने में विचार किया जाय तो, ईर्ष्या, घृणा, असन्तुष्टता तथा काम-क्रोध, लोभ मोहादि से सुख प्राप्ति या दुःख की निवृत्ति नहीं हो सकती। अपितु ज्ञान को प्रद्योतित करने वाले वेदों से ही उस सुख स्वरूप सत्य की प्राप्ति हो सकती है।

वेद में विविध विध उपासनाओं का वर्णन मिलता है, फिर भी द्विजाति के लिए सुख की प्राप्ति तथा दुःख की निवृत्ति और मोक्ष की प्राप्ति एक मात्र गायत्री

उपासना ही श्रेष्ठतम मानी गई है, जिसकी उपासना करने पर द्विज न केवल अपना अपितु चारों वर्णों तथा चारों आश्रमों का कल्याण कर सकता है।

गायत्री मन्त्र का यह विशिष्ट अभिप्राय है कि मानसिक चित्तवृत्तियों को नियन्त्रित कर उपासनामयी बुद्धि को पैदा करता है। जिस प्रकार पशुओं को चराने वाले दण्ड लेकर पशुओं को नियन्त्रित करने के लिए पीछे भागते है, उसी प्रकार देवता रक्षा करने के लिए पीछे नहीं भागते अपितु सहबुद्धि देते हैं।

गायत्री सभी वेदों का सार है। आद्य शंकराचार्य ने अपने भाष्य में लिखा है ओंकार सहित सात व्याहृति रूपी, शिर से युक्त गायत्री को समस्त वेदों का सार कहा जाता है। यह गायत्री मंत्र ओंकार (प्रणव) सहित तीन व्याहृतियों के साथ जपा जाता है।

गायत्री मंत्र में सर्वप्रथम वेदों का जो सारभूत ओंकार (प्रणव) है उसके उच्चारण के बाद भूः, भुवः, स्वः, यह तीन व्याहृतियां लगाई जाती है, इन व्याहृतियों के अर्थ को आगे लिखा जा रहा है।

इनकी महिमा का वर्णन वेदो में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

एक बार प्रजापति ब्रह्मा लोकों में सारभूत वस्तु को जानने की इच्छा से तपस्या करने लगे। तपस्या से ब्रह्मा ने पृथवी में अग्नि देवता को, अन्तरिक्ष में वायु देवता को, और स्वर्ग में आदित्य (सूर्य) देवता को सार रूप में देखा।

पुनः संयम पूर्वक तपस्या करने पर, अग्नि में ऋग्वेद को वायु में यजुर्वेद को और आदित्य में सामवेद को साररूप में देखा। पुनः तपस्या करने पर ऋग्वेद में "भूः" यजुर्वेद में "भुवः" तथा सामवेद में "स्वः" व्याहृति को देखा। इसीलिए यह महाव्याहृतियां, तीनों लोक में सभी देवताओं तथा वेदों में निश्च्योतभूत (सारतम) वस्तु हैं।

"भूः" का अर्थ है "सत्", "भुवः" का अर्थ है "चित्", स्वः का अर्थ है "आनन्द" तीनों व्याहृतियों का अर्थ हुआ सत्-चित्-आनन्द (सच्चिदानन्द)। इस प्रकार गायत्री मंत्र के आदि में आवश्यक रूप से लगाई जाने वाली प्रणव ॐकार सहित तीन महाव्याहृतियों का महत्व स्पष्ट रूप से प्रतीत हो रहा है।

प्राणायाम में तीनों महाव्याहृतियों सहित शेष चार व्याहृतियों का अर्थ इस प्रकार है, शांकरभाष्य में भी "सप्तव्याहृत्योपेतां" कहा है।

चतुर्थ व्याहृति "महः" है जिसका अर्थ महत्तर है, पांचवी व्याहती "जनः" है, जो सब कारण का नाम है। षष्ठी व्याहृति "तपः" है, जो सर्व तेजोमय का नाम है,

सातवीं व्याहृति "सत्यम्" जिसका अर्थ सर्वविध बाधाओं से रहित होना है।

मन्त्र में प्रयुक्त व्याहृतियों का अर्थ

व्याहृति शब्दार्थ-

(क) विशेषेण आहृतिः सर्वविराजः प्राह्वानंप्रकाशी करणं व्याहृतिः।

विशेष प्रकार से आहृति अर्थात् सर्व विराट का बोध अर्थात् प्रकाश करने से व्याहृति हुआ।

(ख) भूर्भुवः सुवर्ब्रह्म। भूर्भुवः सुवराप ओम्।

अर्थात् भूर्भुव स्वः ब्रह्म स्वरूप है, तथा भूर्भुवः स्वः और जल ओंकार रूप है।

(ग) योग यज्ञवल्क्य में कहा है कि-

भूर्भुवस्स्वस्तथापूर्वं स्वयमेव स्वयम्भुवा।
व्याहृता ज्ञान भेदेन तेन व्याहृतयः स्मृताः।।

अर्थात्-सृष्टि से पूर्व स्वयं ब्रह्मा ने ज्ञान देह से "भूर्भुवः स्वः" कहा है इस कारण से व्याहृतियां कही जाती हैं।

(घ) कुर्म पुराण के उत्तर विभाग में कहा है कि-

प्रधानं पुरुषः कालो ब्रह्म विष्णु महेश्वराः।
सत्वंरजस्तमस्तिस्त्रः क्रमाद्व्याहृतयः स्मृताः।।

अर्थात्-प्रधान पुरुष, काल, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सत्व, रज, तम तीनों क्रम से व्याहृतियां कही गई हैं।

प्रथम व्याहृति "भूः" का अर्थ-

(च) भवतेः क्विपि भूरिति रुपम्।

भूः धातु से क्विप् प्रत्यय करने से भूः ऐसा रूप होता है।

(छ) विष्णु सहस्त्रनाम भाष्य में लिखा है कि - भवतीति भूः पृथवी जो सभी के उत्पत्ति का स्थान है लिङ्गस्थान पातालादि सप्तभुवन सहित भू लोक है।

(ज) याज्ञवल्क्य के अनुसार

भवन्ति चास्मिन् भूतानि स्थावराणि चराणि च।
तस्माद्भूरिति विज्ञेया प्रथमा व्याहृतिस्तु या।।

अर्थात्-जिसमें चराचर भूत उत्पन्न होते हैं इसलिए "भूः" को प्रथम व्याहृति कहा गया है।

(झ) तैत्तरीयोपनिषद् के अनुसार-"भूः" यह निश्चित रूप से प्राण है। सम्पूर्ण प्राणियों को जो जीवित रखे-उसे प्राण कहते हैं। प्राण ही ईश्वर है, वह ईश्वर प्राण का भी प्राण है।

भूः अग्नि है, और अग्नि ही ईश्वर है। जो तीनों काल में रहे वह परमात्म स्वरूप भूः है।

द्वितीय व्याहृति "भुवः" का अर्थ-

सायनभाष्य के अनुसार-

भावयति, स्थापयति विश्वमिति भुवः।

अर्थात् जो विश्व की स्थापना करे वह भुवः है।

भवन्ति भूयो भूतानि उपभोग क्षये पुनः।
कल्पान्ते उपभोगाय भुवस्तेन प्रकीर्तितम्॥

याज्ञवल्क्य के अनुसार-कल्पान्त में भोग के क्षय के पश्चात् फिर उपभोग के लिए उत्पन्न होते हैं। इस कारण से भुवः कहा गया है।

सायन भाष्य के अनुसार-

भुवरिति सर्वं भावयति प्रकाशयतीति व्युत्पत्या चिद्रूपमुच्यते।

इस शांकर भाष्य के अनुसार-भुवः यह सब को प्रकाशित करता है इस व्युत्पत्ति से चैतन्य रूप कहा जाता है।

तृतीय व्याहृति "स्वः" का अर्थ-

(1) सु अवति प्राप्नुवते, इति स्वः।

इस सायन भाष्य वचनानुसार अवति का अर्थ परिपूर्ण है। भलीप्रकार परिपूर्ण होने से तृतीय व्याहृति को स्वः कहा जाता है।

(2) स्वः व्याहृति का अर्थ करते हुए विष्णुसहस्रनाम भाष्य में कहा है कि-

स्वर्यन्ते उच्चार्यन्ते प्रकटी भवन्ति देह देवता यतः तत् स्वः त्रयस्त्रिंशत्कोटिदेवता-लयः-स्वर्लोक इति।

देह के देवता जिससे प्रकट हों उसको स्वः कहते है अर्थात् तैतीस करोड़ देवताओं का स्थान स्वर्ग लोक है।

(3) तैत्तरीयोपनिषद् शिक्षाध्याय के अनुसार-

सुवरित्यादित्यः। आदित्य रूपेश्वरः।

इस वाक्य के अनुसार सुवः यह आदित्य है, आदित्य ही ईश्वर है।

स्वः शब्द सुखवाची है, सम्पूर्ण ऐश्वर्य श्रेष्ठ अनन्त सुख जिससे प्राप्त हो वह "स्वः" व्याहृति है।

तैत्तरीय भाष्य शिक्षाध्यायानुसार-

स्वः-यह व्यान वायु है (व्यानः सर्व शरीरगः) के अनुसार यह वायु सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हैं। जो संसार में व्यापक होकर प्राणादि सभी को चेष्टा कराता है वह व्यान वायु सबका अधिष्ठान व्यापक ब्रह्म है।

गायत्री उपासना के लिए सन्ध्या अनिवार्य

गायत्री मन्त्र की उपासना, जप पुरश्चरण आदि से पूर्व-द्विज अर्थात् ब्राह्मण-क्षत्रिय, वैश्य को सन्ध्या करना आवश्यक है, क्योंकि इन वर्णों का गायत्री के साथ अविनाभाव (नित्य) चोली दामन का सम्बन्ध है, शास्त्र नियमानुसार-निर्धारित की गई आयु में उपनयन (यज्ञोपवीत संस्कार पूर्वक गायत्री मंत्र की दीक्षा लेना आवश्यक है। ब्रह्मास्त्र, पाशुपतास्त्र आदि बड़े-बड़े अस्त्र गायत्री मंत्र की अनुलोम विलोम विधि से तैयार किये जाते हैं। जो छोटे-बड़े शस्त्रास्त्रों का सफाया करके मानव-दानव सभी को पराजित कर देते हैं।

विश्वामित्रस्मृति में कहा गया है कि-

असुराणां वधार्थाय अर्ध्य काले द्विजन्मनाम्।
प्रोक्तं ब्रह्मास्त्रमतेद्धि सन्ध्याबन्दन कर्मणि।।

अर्थात्-सन्ध्यावन्दन के अवसर पर-गायत्री मंत्र के उच्चारण के साथ दिया गया अर्ध्य ऐसे ही ब्रह्मास्त्र का रूप धारण कर सूर्य के सभी शत्रु राक्षसों का संहार करके सूर्य भगवान् को उदित होने के लिए उनके मार्ग (रास्ते) को निष्कण्टक (कांटों से) विघ्नवाधाओं से रहित बना देता है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार-जब विश्वामित्र ने महर्षि वसिष्ठ के वध के लिए शंकर के प्रसाद से प्राप्त ब्रह्मास्त्र, पाशुपतास्त्रादि विविध दिव्यास्त्रों का प्रयोग किया उस समय वसिष्ठ ऋषि ने केवल ब्रह्मदण्ड से उन सभी शस्त्रों को सामर्थ्यहीन व्यर्थ बना दिया। यह सब ब्रह्मदण्ड गायत्री की ही देन है।

विश्वामित्र ने स्वयं इस 'ब्रह्मदण्ड' के निर्माण के लिए चतुष्पदा गायत्री

"परोरजसेऽसावदोम्" जिसे सन्यासी महात्मा लोग जपते हैं का प्रयोग बतलाया है। जैसे-

ब्रह्मदण्डं तथावक्ष्ये सर्वशस्त्रास्त्र नाशनम्।
गायत्री सम्यगुच्चार्य परोरजसीति संयुतम्
एतद्वै ब्रह्मदण्डंस्यात् सर्वशस्त्रास्त्र भक्षणम्।। विश्वा.स्मृ. 19-20

"सावित्र्यास्तु परं नास्ति" "न सावित्र्याः परं जाप्यम्" ऐहिकामुष्मिकं सर्वं गायत्री जपतो भवेत्। इत्यादि प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि गायत्री जप से अधिक और कोई जप नहीं। इस लोक में और परलोक में जो भी प्राप्त करना है वह सब कुछ गायत्री मंत्र से प्राप्त किया जा सकता है।

ब्रह्मादयोऽपि सन्ध्यायां तां ध्यायन्ति जपन्ति च।
वेदा जपन्ति तां नित्यं वेदोपास्या ततः स्मृता।। दे.भा. 16/16

अर्थात्-ब्रह्मादि देवताा भी सन्ध्योपासन के समय गायत्री देवी का ध्यान तथा जप करते हैं। वेद भी उस गायत्री का जप करते हैं-इसीलिए इसको वेदोपास्या कहा है।

गायत्री को सम्पूर्ण संसार का आधार कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी।

यह मन्त्र-शौचाचार-सदाचार-आभ्यन्तरिक और बाह्य रूप से शुद्ध होकर यज्ञोपवीत "ब्रह्मसूत्र" धारण कर उस परमेश्वर की प्राप्ति के लिए सन्ध्योपासना करके अग्रसर होना चाहिए। महर्षि वेदव्यास तथा वाल्मीकी ने स्वयं सुसंस्कृत होकर वेदव्याख्या-तथा रामायण के माध्यम से मानव-जाति को सुसंस्कृत करने के लिए, अनुशासित करने के लिए, नैतिकताओं का आचरण करने के लिए, सन्मार्ग को अपनाने के लिए-असहमार्ग और असद् प्रवृत्तियों को दूर करने के लिए, विविध आदर्शपूर्ण शिक्षाएं दी हैं, आज मानव-जाति सद्मार्ग से भटककर विद्वान् तथा गुरु, उपदेशकों के अभाव में अपने अपने कर्तव्य पथ से हटती हुई प्रतीत हो रही हैं, शास्त्रों का मानव जनोचित् ज्ञान भूल भुलाकर पल्लवग्राहि पाण्डित्य से जनता को गुमराह कर रहे हैं। यह लोक, संसार, भारत, जनता, संस्कृत, सांस्कृति सभी हमारे हैं।

धर्म चाहे कोई भी है-दीक्षा चाहे किसी भी मंत्र की ली हो-जाति वर्ग चाहे कोई भी है-वेशभूषा बोली चाहे कोई भी हो, शारीरिक रूप से चाहे कोई गोरा हो या काला हो, भाषा चाहे कोई भी हो, चाहे कोई हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई-क्रिश्चियन कोई भी हो, सभी ग्रन्थों की सद्धर्मों की शिक्षाएं मानव मात्र को एक होकर, धर्म-नीति-अनुशासन सदाचार "वसुधैव कुटुम्बकम्" (सभी संसार हमारा ही कुटुम्ब है

की शिक्षा देती हैं।

अतः मानव मानव के प्रति सद्भाव-मैत्री, धर्म सहिष्णुता, परोपकारिता, सुख-दुःख, लाभ-अलाभ, जय विजय में एक दूसरे के साथ स्नेहिल होता हुआ, मतभेदों को दूर भगाकर परस्पर सब की समृद्धि की कामना करता हुआ, केवल प्राणिमात्र का ही नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार चर-अचर का संरक्षक जीवनाधायक प्रकाश पुञ्ज के रूप में उपस्थित सभी देवी देवताओं का उपास्य वह सूर-सूर्य, आदित्य, द्वादशात्म, दिवाकर भास्वत्-विभस्वत्, सप्ताष्व-पूषन्, द्युमनि, त्तरणि मित्र, चित्राभानु, उषापति, विभावसु, ग्रहपति भास्वान् वह सभी का जीवनाधायक (पोषक) तत्व सविता सूर्य गायत्री रूप में हम सबका आराध्य है-अतः उस गायत्री- सवितादेव का आशीर्वाद, वरदान प्राप्त करने के लिए गायत्री आराधना के योग्य अपने को संस्कारवान् पवित्र आराधक बनाकर, योग्य गुरु के द्वारा दीक्षित होकर, गायत्री जप, उपासना, पुनश्चरण से पूर्व सन्ध्योपासना अवश्य कर लें।

सभी लोग सन्ध्या में आने वाले मन्त्रों का उच्चारण करने में असमर्थ भी हो सकते हैं, वे उपासक आत्मशुद्धि पूर्वक गायत्री जप की एक-एक माला जप करने का अभ्यास अवश्य करें।

सन्ध्या शब्द का अर्थ, तथा आवश्यकता

सम्यग् ध्यायन्ति, सम्यग् ध्यायतेवा, परब्रह्म यस्यां सा सन्ध्या।

जिस समय विशेष में अच्छी तरह से ध्यान करते हैं अथवा परब्रह्म स्वरूप उस गायत्री का ध्यान करते हैं उसको सन्ध्या कहते हैं। अथवा-

अहोरात्रस्य या सन्धिः सूर्य नक्षत्र वर्जिता।
सा तु सन्ध्या समाख्याता मुनिभिस्तत्व दर्शिभिः॥

अर्थात्-दिन और रात का सूर्य तथा तारों से रहित जो समय है उस समय को तत्वदर्शी मुनियों ने सन्ध्या कहा है।

तैत्तरीय ब्रह्मण में कहा है कि-

"अहरहः सन्ध्यामुपासीत्" अर्थात् प्रतिदिन सन्ध्या की उपासना करे।

शक्तिमानुदिते काले स्नानं सन्ध्यां न हापयेत्।

इस व्यास वचन के अनुसार-शक्तिमान् अर्थात् सूर्य भगवान् के उदय होने के समय स्नान और सन्ध्या कभी न छोड़े अर्थात् स्नान और सन्ध्या अवश्य करें।

सन्ध्या के भेद

उत्तम, मध्यम, अधम प्रकार से सन्ध्या के तीन प्रकार कहे हैं जैसे-

उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्त तारका।
अधमा सूर्य सहिता प्रातः सन्ध्या त्रिधास्मृता।। दे.भा.

अर्थात्-आकाश में नक्षत्रों (तारों) के होने पर की जाने वाली सन्ध्या उत्तम कहलाती है। तारों के लुप्त हो जाने के समय से लेकर सूर्योदय के समय तक ही जाने वाली सन्ध्या मध्यम कहलाती है।

सूर्य के उदय हो जाने पर की जाने वाली सन्ध्या अधम कहलाती है प्रातः काल की सन्ध्या के यह तीन प्रकार हैं।

इसी प्रकार सायंकाल की सन्ध्या के तीन प्रकार हैं जैसे-

उत्तमा सूर्य सहिता मध्यमास्तमिते रवौ।
अधमा तारको पेता सायं सन्ध्या त्रिधास्मृता।।

अर्थात्-सायंकाल सूर्य के होने पर की गई सन्ध्या उत्तम, सूर्य के अस्त होने पर तथा तारों के उदय से पूर्व की गई सन्ध्या मध्यम तथा तारों के उदय के पश्चात् की गई सन्ध्या अधम कही गई है।

सन्ध्या अनन्त फल देने वाली है यदि कभी निश्चित समय पर सन्ध्या न हो सके तो भी सन्ध्या की इति कर्तव्यता पूरी कर लेनी चाहिए। सन्ध्या के विषय में, महाव्याहृतियों के विषय में गायत्री मंत्रार्थ के विषय में शास्त्रों के माध्यम से बहुत कुछ कहा जा सकता है परन्तु इस विषय का अधिक विस्तार न हो यथाशक्ति सभी जन संक्षिप्तरूप से सन्ध्या एवं गायत्री के विषय में जान सकें उन्हीं के लिए यह संक्षिप्त प्रयास है।

ब्राह्मण के लिए सन्ध्या करना तथा गायत्री का जप करना बहुत आवश्यक है क्योंकि ब्राह्मण-यज्ञ करता है, यज्ञ करवाता है, विद्या अध्ययन करता है, विद्या अध्ययन करवाता है, दान देता है, दान लेता है। इस प्रकार के कार्यों के अतिरिक्त, वेद-उपनिषद-रामायण, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्रादि ग्रन्थों से ज्ञान प्राप्त कर सम्पूर्ण समाज को (प्रत्येक वर्ग को) ज्ञानवान् बनाने का दायित्व ब्राह्मण का ही है, परन्तु ब्राह्मण यह सब भूलकर कदाचारों में फंसकर अपने कर्तव्य (दायित्व को यदि भूल जाए तो सामाजिक व्यवस्था बिगड़ने का दोष किस पर है, निश्चित ही ब्राह्मण पर है। अतएव गृहीत दानजन्य दोष दूर करने के लिए गायत्री की आराधना से स्वयं तेजस्वी बनकर दूसरों को उस तेज से शुभाशीर्वाद देकर लोक और परलोक के मार्ग

को कण्टक रहित बनाता है। अतएव ब्राह्मण के लिए सन्ध्या करना तथा गायत्री की उपासना करना अत्यन्त आवश्यक है और लाभप्रद है। वर्तमान समय में कुछ ही पंडित, ब्राह्मण तथा शास्त्रज्ञ होंगे जो सन्ध्या तथा गायत्री जप करते होंगे।

गायत्री उपासना का चमत्कार

निश्चित विधि-विधान से पवित्र होकर सभी को सन्ध्या तथा गायत्री उपासना करनी चाहिए। एक बार एक गायत्री उपासक ब्राह्मण ने गायत्री माता के प्रत्यक्ष दर्शन के लिए चौबीस लाख गायत्री का पुनश्चरण किया, गायत्री माता का साक्षात्कार न होने से निराश हुआ। उसने दूसरी बार फिर चौबीस लाख गायत्री का पुरश्चरण किया परन्तु गायत्री का साक्षात्कार फिर भी नहीं हुआ। उस ब्राह्मण को कोई दूसरा व्यक्ति मिला और उसने उससे कहा कि कितने समय से आप गायत्री उपासना में लगे हैं। आज तक आपको कुछ मिला? मेरे पास भूत प्रेत विद्या है, थोड़े ही दिनों मैं उसको आपके सामने प्रत्यक्ष ला दूंगा।

गायत्री उपासना करने वाले ब्राह्मण ने कहा कि अच्छा तो तुम मुझे भूत सिद्धि करवा दो। भूत सिद्धि करने की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई, कुछ दिन बाद गुरु ने कहा कि कल भूत आपके सामने (प्रत्यक्ष) आ जाएगा। उसको बलि स्वरूप भेट दे देना और वह आपके वशीभूत हो जाएगा।

दूसरे दिन भूत आया पर सामने ना आकर पीठ के पीछे कुछ दूरी पर खड़ा हो गया और कहने लगा कि आप जो चाहते हो वह मांगो गुरु ने भूत को कहा कि साधक के सामने जाओ तो भूत ने कहा कि मैं इस व्यक्ति के सामने नहीं जा सकता। मैं जब जाने की कोशिश करता हूँ तो मेरा शरीर जलने लगता है, इस व्यक्ति ने गायत्री का बहुत जप किया है, उसके प्रभाव से मैं इसके पास नहीं जा सकता। यदि जाऊँगा तो भस्म हो जाऊँगा। गुरु ने जब यह सब उस ब्राह्मण को सुनाया तो उसने कहा कि मैं भूत सिद्धि को छोड़कर पुनः गायत्री उपासना करूंगा, वह पुनः गायत्री उपासना करने लगा। पुरश्चरण समाप्ति के बाद हवन करते समय भगवती माता गायत्री वहां प्रकट होकर कहने लगी कि वर मांगो तब उस साधक ब्राह्मण ने पूछा कि मैंने विधि-विधान से दो पुरश्चरण पहले भी किए तब आपने दर्शन क्यों नहीं दिए तब गायत्री-माता ने कहा कि-पहले पुरश्चरण से आपके पूर्वजन्म के किए हुए पाप नष्ट हुए, दूसरे पुरश्चरण से इस जन्म के किए हुए पाप नष्ट हुए, इस बार में आपकी उपासना से प्रसन्न हुई हूँ। अब आप तेजस्वी, प्रभावान्, वाक्सिद्धि से परिपूर्ण होकर अपने तथा अन्य लोगों के कार्य को सिद्ध करो। गायत्री मंत्र की तपस्या का यह प्रभाव देखकर

परम प्रसन्नता को प्राप्त हुआ और गायत्री उपासना में तल्लीन रहकर अपने तथा दूसरे लोगों के कार्य सिद्ध करके लोक तथा परलोक के मार्ग को अत्यन्त सुगम बना दिया। अभिप्राय यही है कि गायत्री उपासना से मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है। इसलिए कहा है कि-

स्वकाले सेविता नित्यं सन्ध्या कामधुगा भवेत्।
अकाले सेविता सा च सन्ध्या बन्ध्या वधूरिव॥ वि.मित्र.

अर्थात्-नियत समय पर "निर्धारित समय पर" की गई सन्ध्योपासना कामधेनु गौ की तरह कामनाओं को पूर्ण करने वाली होती है। वही सन्ध्या निर्धारित (निश्चित) समय पर न की जाए तो वह सन्ध्या "वन्ध्या" वधू की तरह (जिस वधू को सन्तान उत्पन्न न हुई हो) उसको वन्ध्या कहा जाता है। उस वधू की तरह फलाभाव में निरर्थक होती है।

गायत्री देवी की उपासना सभी वेदों का सार स्वरूप है।

सन्ध्या किस प्रकार से करनी चाहिए उसके करने की विधि कैसी हो यह सब-गोविन्द भवन-कार्यालय, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित सन्ध्योपासन, साभार प्रदार्शित की जा रही है। उसके अनुसार सभी द्विज प्रतिदिन सन्ध्या करके अपने संचित पापों को दूर भगाकर अपनी मनोऽभिलषित कामनओं को पूर्ण कर सकते हैं।

सर्वदा बन्दनीय योगिराज श्री बावा बल्लो जी का एक चमत्कारिक आख्यान

गायत्री मन्त्र की उपासना से जम्मू से 35 कि.मी. दूर मथवार स्थान में परम योगी गायत्री के परम उपासक बावा बल्लो जी का आख्यान (चमत्कार) ब्राह्मण को सन्ध्योपासना के प्रति गायत्री उपासना के प्रति बरबस आकर्षित करता है जैसे-

इस भूमण्डल पर स्वर्ग कहे जाने वाली जम्मू कश्मीर की पवित्र धरती पर समय-समय पर शक्ति, पीर, पैगम्बर, सिद्ध, योगी आदियों का आविर्भाव होता रहा है जिनसे समस्त जनता उपकृत होती रही है। इसी प्रकार मन्दिरों के शहर जम्मू से 35 किलोमीटर दूर चन्द्रभागा के किनारे हरियाली लिए सभी भक्तों के मन को अपनी सुन्दरता से वरवस अपनी ओर खींचता हुआ पवित्र प्रसिद्ध मथवार नाम का गांव है।

यहां पर गायत्री के परम उपासक अलौकिक चमत्कारों से परिपूर्ण परमपूज्य परम तपस्वी श्री बावा बल्लो जी का प्रादुर्भाव आज से 704 वर्ष पूर्व हुआ, इनके पिता का नाम श्री मोतीराम तथा माता का नाम जीवनी देवी था। जन्म के बाद ज्योतिषी ने श्री मोतीराम जी को बता दिया था कि यह बालक बड़ा तपस्वी और चमत्कारी

होगा। बालक दिन प्रतिदिन शुक्लपक्ष की चन्द्रमा की तरह बढ़ने के साथ-साथ तेजस्वी भी होने लगा जो दूसरे बालकों की अपेक्षा असाधारण था।

इनकी शक्ति और चमत्कारों को देखकर इनको बावा बल्लो के नाम से पुकारने लगे। बावा बल्लो को गौएं चराने का बड़ा शौक था हर रोज गौओं को चराने के लिए कोटली के पास सरोट चले जाते थे।

सरोट में चन्द्रभागा के किनारे गौओं को चराकर चन्द्रभागा में जल भी उन गौओं को पिलाते थे।

वहीं पर सूड़े जाति का राजपूत जिस का नाम बगड़ा था उनसे बावा जी की मित्रता (दोस्ती) हो गई, उसके बाद यह दोनों सरोट से मथवार व मथवार से सरोट आते जाते थे, बावा जी गौओं के परम सेवक थे मथवार से जब सरोट जाते थे तब अपना पूजा पाठ तथा गायत्री उपासना सरोट में करते थे। जव सरोट से गौएं चराते-चराते मथवार पहुंचते थे तव वहीं पर्वत के ऊंचे टीले पर (जो आज बावा जी का स्थान है) अपनी गायत्री की तपस्या (आराधना) किया करते थे। आज भी वह स्थान सुरक्षित और एक थड़े के रूप में विद्यमान है।

कभी-कभी रिक्त (खाली) समय में सरोट में एक तालाब की खुदाई करते रहते थे। बगड़ा नाम का राजपूत जो बावा जी के मित्र बन गये थे वे आम का व्यापार करते थे, एक बार आम लेने के लिए किसी के साथ उन्होंने सौदा किया, इसी गांव में कड़कयाल जाति के ठक्कर (ठाकुर) रहते थे, वे भी पके हुए आम के फलों का सौदा करना चाहते थे क्योंकि वहां पर आम के बहुत से वृक्ष थे उन पर पके हुए आम के फलों को देखकर ठाकुरों का मन स्वयं सौदा करने के लिए ललचा रहा था। इसी बात पर बगड़ा राजपूत का कड़कयाल जाति के ठाकुरों के साथ झगड़ा हो गया।

कड़कयाल ठाकुरों ने बावा-बगड़ा को कहा कि आम के सौदे को लेकर जो बात लड़ाई तक आ पहुंची है उसका निर्णय करवाने के लिए कमेटी को बुलाओ। बगड़ा ने पंचों-सरपंचों के द्वारा दूध का दूध, पानी का पानी करने के लिए कमेटी के सदस्यों को तथा अपने रिश्तेदारों को बुलाने के लिए (चन्द्रभागा) दरिया पार जाने की मन में ठान ली।

(चन्द्रभागा) दरिया पर जाते समय राजपूत बगड़े ने बावा बल्लो जी को कहा कि जव तक मैं रिश्तेदारों और पंचों को लेकर वापिस नहीं आता तव तक पके हुए आम के फलों की रखवाली करना, बावा जी पहले दिन से दूसरे दिन दस बजे तक आमों की रखवाली करते हुए वहीं पर बैठै रहे। उसके बाद उन्होंने सोचा कि दरिया

पर स्नान करके, सन्ध्या-पूजापाठ के निवृत्त होकर थोड़ा जल पी लेता हूँ, इस समय के बीच कोई आम तो तोड़ेगा नहीं ऐसा विचार करके बावा जी चिनाव दरिया पर स्नान करने के लिए चले गए, स्नान करने के बाद अभी पूरे वस्त्र भी नहीं पहने थे कि इतने में किसी ने आकर कह दिया कि आप तो यहां स्नान कर रहे हैं परन्तु जिन पके हुए आमों की आप रक्षा कर रहे थे वे सारे आम किसी ने तोड़ लिए हैं, यह बात सुनकर एक दम बावा जी आवेश में आए और कहा कि किसने आम तोड़े हैं, कौन है आम तोड़ने वाला, दरिया से चलकर आम के वृक्षों के नीचे आकर देखा कि आम के वृक्षों से आम तोड़कर उन्हें कड़कयाल ठाकुरों ने टोकरियों में भर दिए थे।

बावा जी ने उन कड़कयाल ठाकुरों को कहा कि जिन आमों की मैं रक्षा कर रहा था उनको आपने क्यों तोड़ा, इसी बहस मुहासे में बावा जी ने उत्तेज होकर कहा कि जहां-जहां से आम तोड़े हैं वहीं-वहीं पर लगा दो, ठाकुरों ने कहा कि टहनियों से तोड़े हुए आम फिर उन्हीं टहनियों में कभी लग सकते हैं? यह काम तो बिल्कुल असम्भव है। इन आमों को तो कोई साक्षात् देवता भी आम के वृक्षों पर नहीं लगा सकता।

कड़कयाल ठाकुर बावा जी की तपस्या की शक्ति को नहीं जानते थे, कड़कयाल ठाकुरों ने कहा कि आप में यदि शक्ति है तो आप ही तोड़े हुए आमों को फिर से आम के वृक्षों पर लगा दो, इस चैलेंज के बाद बावा जी ने अपने इष्ट देवता का स्मरण किया और आम की भरी हुई टोकरियों से आम उठाकर अपने कुरते की गोद में डालते हुए और गोद से आम के वृक्षों के ऊपर फेंकते गए, आम फिर से वृक्षों पर पत्तों सहित जहां-जहां से तोड़े थे वहीं-वहीं पर लगने लगे।

बावा बल्लो जी का यह चमत्कार (करिश्मा) देखकर कड़कयाल ठाकुर भौचक्के होकर सोचने लगे कि यह कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है। क्योंकि आम ऊपर फैंक रहा है और टूटे हुए आम वृक्ष पर लग रहे हैं, इस बात से घबराकर अथवा डरकर ठाकुर वहां से भाग गए।

इसके बाद एक व्यक्ति पेशे में जो योगी था वह गौ आदि पशुओं को चरा रहा था, उस को बावा जी ने कहा कि आप मेरे घर पर जाओ और माता जी को बुलाकर लाओ तथा मेरा कटारा भी साथ में लेते आना, योगी कोटली/सरोट से मथवार आया और माता जी को साथ लेकर फिर सरोट के लिए जाने लगा, माता जी के पहुंचने से पहले ही बावा जी ने अपनी चिता तैयार कर दी थी। माता जी को आते देखकर बावा जी की आंखों में छम छम आंसू गिरने लगे, माता जी ने पूछा बेटा क्यों रो रहे हो, क्या हुआ, माता जीवनी का हृदय पुत्र के रुदन को देखकर, कारण जानने

की इच्छा करने लगा, माता जी ने फिर पूछा कि बेटा बता क्या हुआ, क्यों रो रहा है, इस बार बावा बल्लों जी ने सूड़े जाति के बगड़ा राजपूत द्वारा पक्के आमों की रखवाली के लिए नियुक्त करना, कड़कयाल ठाकुरों के द्वारा आम तोड़ना, बावा जी को आम तोड़ने की सूचना मिलना और बावा बल्लो जी के द्वारा तोड़े हुए आमों को पत्तों सहित पुनः आम के वृक्षों पर लगा देने की बात सुनाई और कहा कि मां गौओं को चराने के साथ-साथ मैंने मथवार की ऊंची पहाड़ी पर (जहां आज बावा बल्लो का चमत्कारिक स्थान है) सूर्य आराधना अर्थात् गायत्री उपासना करके शक्ति अर्जित की थी परन्तु वह शक्ति आज जग जाहिर हो गई है, अब तो मैंने संसार में नहीं रहना है। माता जी आप भी चिता पर बैठो, हम दोनों को संसार में नहीं रहना है। माता जी बावा जी को गोदी में लेकर बैठ गई, जैसे बचपन में बच्चे को दूध पिलाने के लिए मां के स्तनों में दूध आता है वैसे ही मां के स्तनों में दूध आ गया।

इसी समय बावा जी की गौएं तथा एक कुत्ता जो उनके पास ही रहता था वह भी चिता के चारों ओर परिक्रमा करने लगा, उनको बाबा जी ने कहा कि आप चिन्ता मत करो मैं यह शरीर त्याग कर जल्दी आ जाऊंगा। इसके बाद बावा बल्लो जी ने सूर्य भगवान् से अग्नि मांगी देखते ही देखते चिता में आग लग गई और माता जीवनी और पुत्र बावा बल्लो उसी में समा गए। बावा जी के परिवार में जब कोई नहीं रहा तो बावा जी की पांच सौ कनाल ज़मीन का बटवारा एक कोई शरीक करने लगा, और अपने दाहिने बाजू को उठाकर पास में खड़े अपने शरीकों को कहने लगा कि यह ज़मीन आप की है, यह ज़मीन इस की है, यह ज़मीन उस की है, ऐसी ज़मीन बांटने के लिए जो बाजू ऊपर उठी थी वह छः महीने तक वैसी की वैसी ही उठी रही। सभी उपाय करने पर भी कोई आराम नहीं होता था और बाजू वैसी की वैसी ही रहती थी। फिर किसी ने परामर्श (सलाह) दिया कि किसी अच्छे से स्याने के पास जाकर इसको दिखाओ, इसके बाद वे किसी स्याने के पास गए, स्याने ने कहा आप का कोई भाई चिता में समा गया है उस की मन्नत करो उसको देवता की तरह मानोगे तो ठीक हो जाओगे। जैसे ही बावा बल्लो जी को दीप जलाकर माथा टेका तो तत्काल छः महीनों से ऊपर उठी बाजू ठीक हो गई।

जिसकी बाजू ठीक हो गई वे चार भाई थे। एक भाई प्रतिदिन बावा बल्लो जी की याद में दीपक जलाता था परन्तु तीन भाई बावा जी के लिए दीपक नहीं जलाते थे। उनके हृदय में बावा जी के प्रति श्रद्धा नहीं थी। चारों मे से जो एक भाई प्रतिदिन बावा जी के स्थान पर दीपक जलाता था, एक दिन उसको कहीं बाहिर काम पड़ गया और वह बाहिर उस काम को करने के लिए चला गया, बाकी के तीन

भाईयों ने जहां पर उनका भाई प्रतिदिन दीपक जलाता था उस स्थान पर दीपक न जला कर ताला लगा दिया और कहा कि अब देखते हैं कि वह प्रतिदिन दीपक जलाने वाला कहां दीपक जलाएगा। उसके बाद दीपक जलाने वाला भाई आया और उसने देखा कि बावा जी के स्थान पर ताला लगा हुआ है, उसने मुहल्ले के सभी लोगों से कहा, कि मेरे दूसरे भाईयों ने बावा जी के स्थान पर ताला लगा दिया और अव दीपक कैसे जलाया जाएगा। मुहल्ले वाले सभी वहां पर आए और ताला तोड़कर देखा कि अन्दर दीपक जल रहा था।

बोल बावा बल्लो महाराज की जय

उन तीन भाईयों को बाबा जी की शक्ति (चमत्कार) पर यकीन हो गया और वे भी बाबा बल्लो की शक्ति को मानने लगे - उसके बाद 2001 वर्ष तक बेली राम पाराशर के घर पूजा होती रही।

आज वर्तमान में जहां बावा जी का स्थान है वहां पर एक गरने (कंटीली बड़ी झाड़ी) का वृक्ष था, बावा बल्लो जी ने स्वप्न में उस वृक्षनुमा गरने को उखाड़ने का जगा दिया और इस गरने के पौदे को उखाड़ा तो उसके नीचे से विभूति निकली- सम्भवतः इस स्थान पर बावा जी ने तपस्या के साथ-साथ हवन भी किया होगा, जिसकी विभूति उस पेड़ को उखाड़ने के बाद मिली। बाबा जी ने स्वप्न में जो गरने का वृक्ष उखाड़ने के लिए जगा दिया, और उसके नीचे से जो विभूति मिली उससे यही समझा जा सकता है कि बावा जी ने अपना स्थान यहीं पर बनाने के लिए जगा दिया (प्रेरणा दी)।

विभूति, भूति और ऐश्वर्य यह तीनों नाम हर ओर से कल्याण करने वाले हैं अतः यह विभूति कोई सामान्य विभूति नहीं अपितु बाबा बल्लों जी की कठोर तपस्या का सार था इसी स्थान पर प्रतिदिन दीपक जलता रहा।

सबसे पहले यहां एक टीन का शैड्ड डाला गया, कुछ समय बाद सबने मिलकर उस स्थान पर लैंटर डाला, जिससे बावा जी की पूजा करने के लिए तथा भक्तों की सुविधा के लिए तथा आंधी तूफान से बचने की सुविधा हो गई।

यहां यह ध्यान देने वाली बात है कि सूड़े जाति के बावा जी के मित्र (दोस्त) बगड़ा राजपूत को जब यह पता चला की बावा जी अपनी माता सहित सूर्य से अग्नि मांगकर चिता में समा गए हैं तब बगड़ा ने भी अपना शरीर त्याग दिया।

बावा जी ने अन्तिम समय में नीचे लिखी इन तीन बातों के लिए मना किया था-

1. कोई भी व्यक्ति मथवार में या कहीं बाहिर, मथवार में पैदा होने वाले आम नहीं बेच सकता।

2. कोई भी किसी की जामनी-शहादत (गवाही) नहीं दे सकता।

3. एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर मकान नहीं बना सकता।

बावा जी ने ऐसी चेतावनी के बावजूद भी एक व्यक्ति पक्के हुए आमों को टोकरी भरकर ऊपर से बन्द करके बेचने के लिए ले गया जब आम लेने वाले ने कहा कि आम दिखाओं और भाव क्या है आम वाले ने ज्यों ही आमों की टोकरी को खोला तो उसमें से आमों की जगह कीड़े चल रहते थे। उसके बाद उस मथवार निवासी ने उस दिन से आम न बेचने की प्रतिज्ञा ले ली।

बावा बल्लो जी के स्थान पर जो भक्तजन जाते थे उनकी मनोकामनाएं पूर्ण होती थीं धीरे-धीरे इस स्थान का महत्त्व बढ़ने लगा।

पं. काशीराम जी उसके बाद उनके पुत्र पं. रामसरण जी इनके बाद राम सरण जी के पुत्र आकर्षक व्यक्तित्व वाले, बावा जी के परम उपासक, बावा जी के भक्तों का कल्याण करने वाले, बावा जी के स्थान को दिन प्रतिदिन उन्नत करने वाले, आदरणीय पं. श्री देवराज जी शर्मा बावा बल्लो जी के स्थान के पुरोधा (उन्नायक) बनकर उभरे जो निरन्तर बावा के भक्तों का कल्याण करने के लिए निरन्तर प्रयासरत रहते थे-इनके समय में भी इस स्थान पर निर्माण के कई कार्य हुए- इनके ही समय में बावा जी के स्थान पर भक्तों की भीड़ बढ़ने लगी श्रद्धा से आए हुए बावा जी के सेवकों की मनोकामनाएं पूर्ण होने लगी-पं. देव राज जी जन कल्याण में व्यस्त रहने लगे और अपने पुत्र जो सौम्य स्वभाव वाले जो तन-मन-धन से, बल बुद्धि से बावा बल्लो जी के स्थान को और अधिक अच्छा रूप देने में व्यस्त रहते थे, उनके अर्थात् पं. श्री यश पाल शर्मा जी के हाथों में स्थान का कार्यभार सौंपा। सम्माननीय पं. श्री यश पाल शर्मा जी ने इस स्थान पर निर्माण का कार्य थोड़े ही समय में बहुत अधिक करवाया यह निर्माण भक्तों की सुविधा को ध्यान में रखकर करवाया गया है और आज भी आदरणीय पं. श्री यशपाल शर्मा जी निर्माण कार्य करवाने में, स्थान के महत्व को बढ़ाने में बावा जी की आराधाना में, यज्ञ यागादि करवाने में, विशेष रूप से गायत्री यज्ञ करवाने में, सभी बाबा जी के उपासकों का हित साधन में दत्तचित्त होकर हर समय व्यस्त रहते हैं।

इस स्थान पर वसन्त पंचमी के अवसर पर तीन दिनों तक बावा जी की प्रसन्नता के लिए यज्ञ होता है, जिस में हजारों लोग अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करने

के लिए आते हैं और मनोऽभिलषित इच्छाओं को पूर्ण करते हैं।

प्रत्येक वर्ष दो फरवरी को, बावा बल्लो जी का तथा माता जीवनी जी क जन्म महोत्सव बड़ी श्रद्धा और उल्लास के साथ मनाया जाता है।

प्रत्येक पूर्णिमा को चौकी होती है जिसमें बावा बल्लो जी के वंश के पूजक पूजा करते हैं और सभी में बारी-बारी या एक साथ बावा जी का प्रवेश होता है- जिस में बावा जी भूल चूक का सुधार करने के लिए तथा आगे के कार्यक्रमों का मार्गदर्शन करने के लिए चौकी में ही प्रेरित करते हैं।

वर्तमान में प्रत्येक रविवार और सोमवार बावा श्री यशपाल जी मुख्य गद्दी पर विराजमान होकर आए हुए सैंकड़ों भक्तों का कष्ट निवारण करने के लिए उपाय सुझाते हैं तथा सेवकों के द्वारा की हुई गलतियों को बताकर उपाय बतलाते हैं। छः छः (6, 6) महीने के बाद आषाढ़ और कार्तिक पूर्णिमा को तथा गुग्गा नवमी को मेल लगती है, जिसमें जम्मू प्रदेश, हिमाचल, हरियाणा, उत्तर प्रदेश एवं कई अन्य स्थानों से भक्जतन आते हैं और अपनी मनोकामनाओं को पूर्ण करने का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

इस स्थान की एक विशेष बात यह भी है कि जितनी, भोजन में, बोलने में, वेषभूषा में यहां पवित्रता है, उतनी शायद अन्य किसी स्थान में न मिले।

मथवार बावा जी के स्थान में पहुंचने के लिए जम्मू से, गरोटा से, अखनूर से मैटाडोरें चलती हैं बहुत से भक्त अपनी गाड़ीयां लेकर भी जाते हैं।

सालभर में शारद नवरात्रों में बल आजमाने के तौर पर एक दंगल (शिन्ज) होता है जिसमें बहुत दूर-दूर से पहलवान् आते हैं और अपने "पहलवानों" को दाव दिखाकर माली जीतते हैं इस दंगल को देखने के लिए जनता की आपार भीड़ होती है।

इस स्थान पर एडवटाईज़मैन्ट करने की मनाही है। एक बार किसी बिजली लगाने वाले ने अपनी एडवटाईज़मैन्ट करने की गलती की थी, जिससे बिजली के जो स्विच लगाए थे उन्हीं से बिजली नहीं चली, कई बार उनको चैक करने के बाद भी बिजली नहीं चली तो फिर किसी ने उनसे कहा कि आपसे कोई गलती हो गई, बावा जी से माफी मांगो, माफी मांगते ही उन्हीं स्विचों को आन करने पर बिजली आ गई।

बावा जी के स्थान की ओर मुख करके खड़े हो जाएं तो हाल की दाहिनी और थोड़ा सा आगे जाकर एक विशालकाय पीपल का पेड़ है-जो एक ही वृक्ष होकर

चार वृक्षों (ऋग, यजु, साम, अथर्व) वेद के रूप में विराजमान हैं। मध्य के वृक्ष में सांप जैसे अपनी फन फैलाता है तो उसकी गर्दन पर चिह्न होते हैं वही चिह्न उस चार वेद स्वरूप पीपल वृक्ष के हैं।

इसी पीपल वृक्ष के आगे जहां आज फर्श (पलस्तर की हुई जगह) वहां एक तलाई होती थी जिसके पास घोड़ा और चीता आपस में कुश्ती करते थे।

इस स्थान पर दाहिनी ओर एक जल कुण्ड है, जिसमें सभी तीर्थों का जल लाकर भरा है, प्रतिदिन उस कुण्ड में वाटर टैंक का जल छोड़ा जाता है, वह जल तीर्थों के जल से पवित्र होकर बावा बल्लो जी के पूजा स्थान के लिए भरा जाता है।

इसके बाद कुछ सीढ़ियां चढ़कर, कुछ मंदिरों में प्रतिष्ठत मूर्तियां स्थापित की गई हैं, जिनमें धर्मराज, माता वैष्णों देवी, हनुमान जी, लक्ष्मी नारायण जी, भगवान परशुराम जी और विश्वकर्मा जी प्रमुख हैं, इसके बाद कुछ और सीढ़िएं चढ़कर मन्दिर हैं, जिनमें सर्वप्रथम बावा बल्लो जी की माता आज से सात सौ चार साल पहले जिस चक्की में आटा पीसती थीं एक खुदाई में वह चक्की मिली और चक्की से सम्बन्धित सारे सामान के रखरखाव के लिए एक मन्दिर बना है जिसमें रेशमी वस्त्र से लिपटे हुए चक्की तथा अन्य अवशेष रखे हैं।

इसके साथ ही एक मन्दिर और है जिसमें योगीराज तपस्वी श्री बावा बल्लो जी की एवं उनकी माता जी की प्रतिष्ठित मूर्ति विराजमान है जिसकी विधि विधान के साथ प्रतिदिन पूजा की जाती है और प्रतिवर्ष दो फरवरी को पूर्व कथनानुसार जन्मदिन महोत्सव मनाया जाता है।

बावा बल्लो जी तथा माता जी के मन्दिर की दाई ओर कुछ आगे जाकर एक तलाई है जो चारों ओर से कंटीली झाड़ियों से घिरी हुई है। इस का जल तथा मिट्टी (शक्कर) जरूरतमंद भक्तों को दी जाती है, जिसका इस्तेमाल (प्रयोग) करने पर सभी बिमारियां तथा बाहिरी बाधाएं दूर हो जाती हैं। इस स्थान की मिट्टी (शक्कर) तथा जल लेने के लिए बावा जी के कुल पुरोहित ही जा सकते हैं और किसी को भी उस तलाई में जाने की इजाज़त नहीं है।

इस तलाई के बाईं ओर थोड़ा और ऊपर चढ़कर एक थड़ा (चबूतरा) है जिसके साथ एक बड़ा ध्वज स्थापित है। यह थड़ा वही स्थान है जिस स्थान पर बैठकर बावा बल्लो जी ने वेदमाता गायत्री देवी की कठिन तपस्या करके माता का साक्षात्कार प्राप्त किया था।

इसी तपस्या का प्रभाव है कि असंख्य श्रद्धालु बावा जी के स्थान पर आकर अपनी मनोकामनाएं पूरी करते हैं। इस स्थान की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं:-

1. 704 वर्ष पूर्व की परंपराओं का निर्वाह आज तक हो रहा है।
2. बावा जी के भक्त श्रद्धा पवित्रता तथा सादगी से आकर बाबा जी का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।
3. बावा जी के दरबार में चढ़े हुए चढ़ावे से निर्माण कार्य तथा भोजनालय (लंगर) का कार्य चलता रहता है।
4. इस स्थान पर पं. देवराज शर्मा जी ने असाधारण तपस्या की है, उसी का अनुसरण करते हुए पं. यशपाल शर्मा जी निरन्तर अपनी तपस्या रूपी साधना से बावा बल्लो जी का आशीर्वाद प्राप्त करके बाबा जी के दरबार में आने वाले भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण होने का आशीर्वाद तथा उपाय आदि बतला कर जनमानस का कल्याण कर रहे हैं।
5. हैलिकैप्टर उतरने के लिए हैलीपैड की व्यवस्था की है।
6. बावा जी के दरबार में श्रद्धा पूर्वक आने वाले व्यक्ति मनोभिलाषित कामनाओं को पूर्ण करते हैं।
7. इस स्थान में पवित्रता, गायत्रीयज्ञ, दुर्गासप्तशती पाठ तथा बाबा जी की नाम माला का विशेष महत्व है।
8. बड़े-बड़े मंत्री, सांसद, विधायक और गणमान्य व्यक्ति अपनी मुरादों को पूरा करने के लिए दरबार में सिर झुकाए प्रार्थना करते हैं तथा अपनी इच्छाएं पूर्ण होने का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

बोल बाबा बल्लो महाराज की जय

श्री बाबावल्लो जी की स्तुति

श्री वल्लोऽभिधपूज्यपूज्यचरणान् सिद्धाग्रगण्यान्नमस्
कुर्मस्तच्चरणार्चनापरमहो श्रीमद् यशः पालकम्।
भक्तानाममरद्रुमानिव ततः श्री देवराजाभिधान्
तत्तातांश्च नुमोऽनु रामशरणानन्वर्थनाम्नो मुदा॥1॥

यत्रोपेत्य समस्तयाचकजनाः सिद्धाभिलाषाःसदा
बोभूयन्त अनल्पमाप्य तपसां मूर्तेरमोघाशिषम्।
स्थानं तन्मथवारग्राममलं चर्कर्ति धन्यं परम्
वन्देतान् हृदयेन भक्तिभरितः सिद्धांश्च सिद्धस्थलिम्॥2॥

बावाबल्लो सर्वपूज्यः मथवारे प्रतिष्ठितः।
नित्यं समेषां भक्तानामाशांपूरयतिध्रुवम्॥3॥

रामसरणपूज्यो यो देवराजेन पूजितः।
मथवारे तस्य बल्लोः बर्ध्यते यशसा यशः॥4॥

आयान्ति ये दुःखमग्नाः रुदन्तो ह्यत्र प्रत्यहं।
आशिषं प्राप्यश्रीबल्लोः मुदिता यान्ति स्वगृहम्॥5॥

यशःपालमहाभागैः यत्तपस्तप्यते महत्।
तेन स्थानस्य माहात्म्यं प्रत्यहं वर्धते किल॥6॥

बावाबल्लोमहाभागैः यत्तपस्तपितं पुरा।
तपसस्तत्प्रभावेण सिद्ध स्थानमिदं भवि॥7॥

बावाबल्लो सर्वपूज्यः सर्वकार्यार्थ साधक।
सर्वदा सर्व पूज्यस्त्वं भक्तान् पालय सर्वदा॥8॥

त्वामर्चन्ति समेभक्ताः स्वात्म कल्याण हेतवे।
सर्वेषां दुःख तप्तानां त्वमेव शरणं सदा॥9॥

यशःपालस्तत्व युक्तस्तपसा सर्वदा मुदा।
आशीर्वादैः-मन्त्रपूतैः भक्तान् रक्षति सर्वदा॥10॥

ॐ बावाबल्लो:-अष्टोत्तरशत नामानि

1.	ॐ बाबा बल्लो महोदयाय नमः।	2.	ॐ बाबा बल्लवे नमः।
3.	ॐ शत्रु निषूदनाय नमः।	4.	ॐ भक्ततारणाय नमः।
5.	ॐ पवित्रात्मने नमः।	6.	ॐ भक्तजन बल्लभाय नमः।
7.	ॐ प्रियदर्शनाय नमः।	8.	ॐ कार्यसाधकायनमः।
9.	ॐ कष्ट निवारणाय नमः।	10.	ॐ मंगल कर्त्रे नमः।
11.	ॐ पाराशरकुल देवाय नमः।	12.	ॐ भक्त तारणाय नमः।
13.	ॐ पाराशरकुल रक्षणाय नमः।	14.	ॐ पदोन्नति कर्त्रे नमः।
15.	ॐ रोग निवारकाय नमः।	16.	ॐ दु:ख निवारणाय नमः।
17.	ॐ जनकल्याणकराय नमः।	18.	ॐ महासुखकराय नमः।
19.	ॐ सर्वज्ञाय नमः।	20.	ॐ शत्रु पराभवकराय नमः।
21.	ॐ शत्रुकुलसंहर्त्रे नमः।	22.	ॐ यज्ञकर्त्रेनमः।
23.	ॐ यज्ञस्वरूपाय नमः।	24.	ॐ सर्वहितकराय नमः।
25.	ॐ ब्रह्मचारिणे नमः।	26.	ॐ कृतज्ञाय नमः।
27.	ॐ संकट निवारणाय नमः।	28.	ॐ कारागारमोचकाय नमः।
29.	ॐ रोगहराय नमः।	30.	ॐ सिद्धासनाय नमः।
32.	ॐ वेदात्मने नमः।	31.	ॐ सनातनाय नमः।
33.	ॐ यज्ञभोक्त्रेनमः।	34.	ॐ सुखासनाय नमः।
35	ॐ सुखासीनाय नमः।	36.	ॐ सत्याय नमः।
37.	ॐ ज्ञानिने नमः।	38.	ॐ तपस्विने नमः।
39.	ॐ पूतभृतांपतये नमः।	40.	ॐ सिद्धाय नमः।
41.	ॐ ज्ञानभृतांपतये नमः।	42.	ॐ पूजकप्रियाय नमः।
43	ॐ देवराजाय नमः।	44.	ॐ देवाय नमः।
45.	ॐ शर्मणे नमः।	46.	ॐ यशस्विने नमः।
47.	ॐ योगिने नमः।	48.	ॐ साधकाय नमः।
49.	ॐ आशुतोषकराय नमः।	50.	ॐ रामशरणतनयाय नमः।
51.	ॐ देवराज पूजिताय नमः।	52.	ॐ यशोवर्धकाय नमः।

53. ॐ आम्रवृक्षे आम्रफलसंयोजकाय नमः। 54. ॐ ब्राह्मणप्रियाय नमः।
55. ॐ सर्वभक्ततारणाय नमः। 56. ॐ सदाचारिणे नमः।
57. ॐ गोपाय नमः। 58. ॐ आम्ररक्षकाय नमः।
59. ॐ वेदविदांपतये नमः। 60. ॐ वेदात्मने नमः।
61. ॐ गायत्रीतत्वज्ञाय नमः। 62. ॐ गायत्र्युपदेशकराय नमः।
63. ॐ धर्मध्वजाय नमः। 64. ॐ उच्चस्थाननिवासिने नमः।
65. ॐ मथवारशैलनिवासिने नमः। 66. ॐ अश्वत्थपूजकाय नमः।
67. ॐ सूर्यप्रियायनमः। 68. ॐ साधकाय नमः।
69. ॐ शक्त्युपासकाय नमः। 70. ॐ भक्तरक्षकाय नमः।
71. ॐ आपदहर्त्रे नमः। 72. ॐ भक्तवत्सलाय नमः।
73. ॐ सर्वशक्तिमते नमः। 74. ॐ त्रिकाल दर्शिने नमः।
75. ॐ ध्यानगम्याय नमः। 76. ॐ गोधनाय नमः।
77. ॐ जनहितकराय नमः। 78. ॐ वेदस्वरुपाय नमः।
79. ॐ अहंकारविनाशकाय नमः। 80. ॐ भक्ततारणाय नमः।
81. ॐ अमंगलनाशकाय नमः। 82. ॐ धर्मरक्षकाय नमः।
83. ॐ धर्मप्रचारकाय नमः। 84. ॐ आनन्दकराय नमः।
85. ॐ आनन्दमूर्तये नमः। 86. ॐ सुखप्रदायिने नमः।
87. ॐ सर्वोत्तमाय नमः। 88. ॐ विद्याप्रदायकाय नमः।
89. ॐ पुत्रप्रदाय नमः। 90. ॐ व्यवसायवृद्धिकराय नमः।
91. ॐ परमात्मस्वरुपिने नमः। 92. ॐ हितसाधकाय नमः।
93. ॐ ब्राह्मणाय नमः। 94. ॐ गोत्रवर्धकाय नमः।
95. ॐ उत्तमोत्तमाय नमः। 96. ॐ सिद्धाय नमः।
97. ॐ सर्व सिद्धिकराय नमः। 98. ॐ गोधनाय नमः।
99. ॐ धेनु प्रियाय नमः। 100. ॐ यज्ञस्वरुपाय नमः।
101. ॐ प्रणवाय नमः। 102. ॐ सूर्योपासकाय नमः।
103. ॐ गायत्री स्वरुपाय नमः। 104. ॐ यक्षभोक्त्रे नमः।
105. ॐ त्रिकालज्ञाय नमः। 106. ॐ विज्ञानाय नमः।
107. ॐ पवित्राय नमः। 108. ॐ योगगम्याय नमः।

अष्टोत्तरशत नामानि यः पठेत् प्रत्यहं नरः।
सर्वान् कामान्-अवाप्नोति षण्मासैर्नात्र संशयः॥

लिखित 108 नाम का जो प्रतिदिन पाठ करता है उसकी छः महीनों मे मनोऽभिलषित कामनाएं पूर्ण होती है।

अष्टोत्तरशतनाम पद्य प्रसूनाञ्जलिं।
अकिंचनो विश्वमूर्तिः समर्पयति सादरम्॥ –जय बावा जी की

त्रिकाल सन्ध्योपासना के लिए - प्रातः, मध्याह्न तथा सायंकाल के समय क्रम से गायत्री, सावित्री, सरस्वती के ध्यान।

गायत्री ध्यान

ओं मुक्ताविद्रुम हेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दुनिवद्ध रत्नमुकुटां तत्वार्थवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाभयां कुशकशां शुभ्रं कपालं गदां
शंखं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे॥

अर्थ- मुक्ता विद्रुम (मूंगा) सुवर्ण, नीलम तथा स्फटिक के समान समुज्वल तीन-तीन नेत्रों वाले पांचमुखों से युक्त, चन्द्रमा से सुशोभित, रत्नमुकुट धारण करने वाली, चौबीस वर्ण तथा अर्थस्वरूप वाली, हाथों में वरद-अभय मुद्रा, अंकुश, चावुक, शुभ्रकपाल, रज्जु शंख चक्र तथा दो कमल पुष्प (दश) हाथों से धारण करने वाली भगवती गायत्री का मैं ध्यान करता हूँ।

प्रातः मध्याह्न और सायंकाल क्रम से ब्रह्म, विष्णु तथा रुद्ररूपा गायत्री का ध्यान

प्रातः काल में ब्रह्मरूपा गायत्री का ध्यान-

ब्रह्माणी चतुराननाऽक्षवलया कुम्भस्तनी स्त्रुक्श्रुवौ
विभ्राणाऽरुण-कान्तिरिन्दुवदना ऋग्रूपिणी बालिका।
हंसा रोहण-केलिरम्बरमणीर्बिम्बाश्रिता भूतिदा
गायत्री हृदिभाविता भवतु नः सम्पत्समृद्धै सदा॥

मध्याह्न काल में विष्णु रूपा गायत्री का ध्यान-

ध्येया सा च सरस्वती भगवती पीताम्बराऽलङ्कृता
श्यामातन्वि जयादिभिः परिलसद्गात्राञ्चिता वैष्णवी।

ताक्ष्यर्स्था मणि-नूपुराङ्ग-दशत-ग्रैवेय भूषोज्वला
हस्तालम्बित-शङ्ख-चक्र-सुगदा भूत्यै श्रियै चास्तु नः॥

सायंकाल शिवरूपा गायत्री का ध्यान-

रुद्राणी नव यौवना त्रिनयना वैयाघ्रचर्माम्बरा
खट्वाङ्ग-त्रिशिखाक्ष-सूत्र वलया ध्येया यजू रूपिणी।
विद्युद्दाम-जटा-कलाप-विलसद्-बालेन्दु मौलिर्मुदा-
सावित्री वृषवाहना शिततनूर्भूत्यै श्रियैचास्तुनः॥

शापोद्धार विधि

सर्वप्रथम शाप से सम्बन्धित पुराणों में दो कथाएं मिलती हैं। प्रथम कथा के अनुसार ब्रह्मा जी की प्रथम पत्नी "सावित्री" अपने पति की आज्ञा न मानकर यज्ञ में सम्मिलित नहीं हुई, तब ब्रह्मा ने दूसरी पत्नी गायत्री को साथ लेकर यज्ञ सम्पूर्ण किया। इस बात पर सावित्री बहुत क्रोधित हुई। उन्होंने गायत्री को शाप दिया कि तुम्हारी शक्ति नष्ट हो जाएगी। इस शाप से सर्वत्र बहुत चिन्ता फैल गई। देवताओं ने विनयपूर्वक प्रार्थना की कि गायत्री को शाप से मुक्त कर दिया जाए ऐसा न हुआ तो ब्रह्मशक्ति की बड़ी भारी क्षति होगी। तब सावित्री ने एक मन्त्र बताया, जिसके पढने से गायत्री शाप मुक्त हो जाती है। जो उसका (शाप विमोचन) का प्रयोग नहीं करता उसके लिए गायत्री शापयुक्त रहती है।

दूसरे आख्यान का तात्पर्य इस प्रकार है कि-किसी समय, ब्रह्मा, वसिष्ठ और विश्वामित्र ने अपनी-अपनी सृष्टि, स्थिति और प्रलय करने की शक्ति प्राप्त करने के लिए गायत्री-उपासना की थी, परन्तु गायत्री ने इनकी इच्छा पूर्ण नहीं की। तब उन तीनों ब्रह्मा, वसिष्ठ और विश्वामित्र ने क्रोधित होकर गायत्री को शाप दिया कि तेरी शक्ति नष्ट हो जाए। शाप के फलस्वरूप गायत्री शक्तिहीन हो गई। तब देवताओं के द्वारा प्रार्थना करने पर उन तीनों ने शाप-मुक्ति का यह उपाय बताया कि जो मनुष्य शाप विमोचन मन्त्र के साथ जप करेगा, उसके लिए गायत्री शक्ति सम्पन्न होगी।

(1) **गायत्री-शापोद्धार-**

ॐ अस्य गायत्री शापविमोचन मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषि: गायत्री छन्दो वरुणो देवता ब्रह्मशापविमोचने विनियोग:।

ॐ यद्ब्रह्मेति ब्रह्मविदो विदुस्त्वां पश्यन्ति धीरा:।
सुमनसो त्वं गायत्रि ब्रह्मशाप विमुक्ता भव॥

हे गायत्रि! ब्रह्म वेत्ता जिसको ब्रह्म नाम से कहते है, धीर पुरुष अपने अन्तःकरण में आपको उसी रूप में देखते हैं, आप ब्रह्म शाप से विमुक्त हों।

इस गायत्री शाप विमोचन, मन्त्र के ब्रह्मा ऋषि, गायत्री छन्द, वरुण देवता हैं तथा ब्रह्मा शाप के विमोचन में इसका प्रयोग होता है।

(2) **वसिष्ठ शापोद्धार-**

ॐ अस्य गायत्री वसिष्ठशाप विमोचन मन्त्रस्य वसिष्ठ ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दो, वसिष्ठ देवता, वसिष्ठ शाप विमोचने-विनियोगः।

गायत्री के वसिष्ठ शाप विमोचन मन्त्र के वसिष्ठ ऋषि, अनुष्टुप् छन्द, वसिष्ठ देवता हैं तथा वसिष्ठ के शाप विमोचन में विनियोग है।

ॐ अर्क ज्योतिरहं ब्रह्म ब्रह्मज्योतिरहं शिवः।
शिवज्योतिरहं विष्णुः विष्णुज्योतिः शिवः परः।
गायत्रित्वं वसिष्ठ शापाद्विमुक्ता भव॥

मैं सूर्य की ज्योति ब्रह्मा हूँ। मैं ब्रह्मा की ज्योति शिव हूँ। मैं शिव की ज्योति विष्णु हूँ। मैं विष्णु की ज्योति शिव हूँ। हे गायत्रि! आप वसिष्ठ के शाप से विमुक्त हों।

(3) **विश्वामित्र शपोद्धार-**

ॐ अस्य गायत्री विश्वामित्र शापविमोचनमन्त्रस्य विश्वामित्र ऋषिः, अनुष्टुपछन्दः आद्या देवता विश्वामित्र शाप विमोचने विनियोगः।

अर्थ-विश्वामित्र आप विमोचन मन्त्र के विश्वामित्र ऋषि, अनुष्टुप् छन्द और आद्य देवता हैं तथा विश्वामित्र के शाप विमोचन में इनका प्रयोग विनियोग होता है।

ॐ अहोदेवि महादेवि सन्ध्ये विद्येसरस्वति।
अजरे अमरे चैव ब्रह्मयोने नमोऽस्तुते।
गायत्रि त्वं विश्वामित्र शापाद्विमुक्ता भव॥

हे देवि! हे महादेवि! हे ज्ञानरूपे! हे सरस्वति! हे जरारहिते! हे मरणरहिते! आपको नमस्कार हैं। हे गायत्रि आप विश्वामित्र के शाप से मुक्त हों।

इस लिखित प्रकार से सन्ध्या अथवा गायत्री जप के पूर्व ब्रह्म, वसिष्ठ, विश्वामित्र शापोद्धार-संस्कृत में अथवा हिन्दी में लिखित प्रकार से-शापोद्धार करके सन्ध्या/जप/पुरश्चरण प्रारम्भ करें।

शाप विमोचन के लिए द्वितीय प्रकार

देवी भागवत में लिखा है कि शाप विमोचन के लिए भली प्रकार यत्न करना चाहिए और यह भी लिखा है कि ब्रह्म, वसिष्ठ और विश्वामित्र के स्मरण मात्र से शाप का विमोचन हो जाता है। जैसे कहते है–

ततः शाप विमोक्षाय विधानं सम्यगाचरेत्।
ब्रह्मणः स्मरणेनैव ब्रह्म शापाद् विमुच्यते॥

विश्वामित्रस्मरणतो विश्वामित्रस्य शापतः।
वसिष्ठस्मरणादेव तस्य शापो विनश्यति॥

जो साधक शाप विमोचन की लिखित संस्कृत को न पढ़ सके तो हिन्दी में लिखित विधि से शाप विमोचन कर सकते हैं।

या

तीनो शापों के विमोचन के लिए तीनो ऋषियों का स्मरण करते हुए निम्नलिखित प्रकार से वाक्य बोलकर अर्घ के द्वारा या केवल हाथ से जल छोडें-

1. ॐ देवि गायत्रि त्वं ब्रह्मशापाद्विमुक्ता भव।
2. ॐ देवि गायत्रि त्वं वसिष्ठ शापाद्विमुक्ता भव।
3. ॐ देवि गायत्रि त्वं विश्वामित्र शापद्विमुक्ता भव।

अंगन्यास

अंगन्यास की विविध विधिएं भिन्न-भिन्न उपासनाओं के अनुसार भिन्न-भिन्न ग्रन्थों में बताई गई हैं-मंत्रपूर्वक अंगों में देवता न्यास (अंगों का स्पर्श) इस भावना से किया जाता है कि मेरे यह अंग, गायत्री शक्ति से (अथवा अन्य उपासनीय शक्ति के मन्त्र से पवित्र तथा बलवान् हो रहे हैं।

सम्प्रदायान्तर में प्रणव और व्याहृति त्रय सहित सम्पूर्ण गायत्री मंत्र के भी षंडगन्यास किए जाते हैं। जैसे–

(1) ॐ भू र्भुवः स्वः अगुष्टाभ्यां नमः (दोनों हाथों के अंगूठों का स्पर्श करे।)

(2) ॐ तत्सवितुः तर्जनीभ्यां नमः (दोनो हाथों की तर्जनी अंगुलियों का स्पर्श करें।)

(3) ॐ भर्गोदेवस्य-मध्यमाभ्यां नमः (दोनों हाथों की मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करें।)

(4) ॐ धीमहि-अनामिकाभ्यां नमः (दोनों हाथों की अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करें।)

(5) ॐ धियो योनः-कनिष्ठिकाभ्यां नमः (दोनों हाथों की कनिष्ठका अंगुलियों का स्पर्श करें।)

(6) ॐ प्रचोदयात्-करतल करपष्ठाभ्यां नमः (दोनों हाथों का बाहर-भीतर स्पर्श करें।)

(1) ॐ भूर्भुवः स्वः - हृदयापनमः - हृदय का स्पर्श करें।

(2) ॐ तत्सवितुः - शिर से स्वाहा -सिर का स्पर्श करें।

(3) ॐ भर्गो देवस्य - शिखायै वौषट् - शिखा का स्पर्श करें।

(4) ॐ धीमहि - कवचाय हुम् - पांचों अंगुलियों के अग्रभाग से दाएं से बाएं-कंधे का, तथा बाएं हाथ की अंगुलियों से दाहिने कंधे का स्पर्श करें।

(5) ॐ धियो यो नः - नेत्रत्रयाय वौषट् - दाहिने हाथ की तर्जनी तथा अनामिका से दोनों नेत्र तथा मध्यमा से माथे के मध्य भाग में तीसरे नेत्र (ज्ञान चक्षु) का स्पर्श करें।

(6) प्रचोदयात् - अस्त्राय फट - दोनों हाथों का बाहर और भीतर के भाग का स्पर्श करें तथा बाई हथेली पर दाहिने हाथ की मध्यमा तथा तर्जनी से तीन ताली चुटकी बजाएं।

कुछ पुस्तकों का मत है कि सन्ध्या के लिए अङ्गन्यास की आवश्यकता नहीं यदि आवश्यक समझें तो सूर्योपस्थान के बाद लिखित प्रकार से उस-उस अंग का स्पर्श करते जाएं-

(1) ॐ हृदयाय नमः (हथेली से हृदय का स्पर्श करें।)

(2) ॐ भूः शिरसे स्वाहा (चारों अंगुलियों के पोर से सिर का स्पर्श करें।)

(3) ॐ भुवः शिखायै वषट् (अंगूठे से शिखा का स्पर्श करें।)

(4) ॐ स्वः कवचाय हुम् (हाथों को मोड़कर पांचों अंगुलियों के अग्रभाग से दाहिने हाथ से बाएं कन्धे का और बाएं हाथ से दाहिने कन्धे का स्पर्श करें।)

(5) ॐ भूर्भुवः स्वः नेत्राभ्यां वौषट् (मध्यमा और तर्जनी से नेत्रों ाक स्पर्श करें।)

(6) ॐ भूर्भुवः स्वः अस्त्रायफट् (बाई हथेली पर दाएं हाथ की मध्यमा एवं तर्जनी से तीन ताली बजाकर बाई ओर से प्रारम्भ कर अपने चारो ओर चुटकी बजाएं।)

उत्कीलन—गायत्री का अनुभवी गुरु निर्देशक मिल जाना ही उत्कीलन है।

जप के समय मनोऽभिलषित कामनाओं की पूर्ति के लिए प्रशस्त दिशाएं

वशीकरण के लिए - पूर्वाभिमुख, मारण के लिए दक्षिणाभिमुख धन प्राप्ति के लिए पश्चिमाभिमुख, शक्ति के लिए कर्ता उत्तराभिमुख होकर भगवती गायत्री की यथा विधि उपासना करे।

सभी नित्यकर्मों में एक हजार या अष्टोत्तरशत (माला) अशक्त होने पर अठाईसबार या दस बार जप अवश्य करें।

ब्राह्मण के लिए सन्ध्योपासना तथा गायत्री जप परमावश्यक

विप्रो वृक्षो मूलकान्यत्र सन्ध्या
वेदः शाखा धर्मकर्माणि पत्रम्।
तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं
छिन्ने मूले नैव वृक्षो न शाखा॥

विप्र वृक्ष है, ये सन्ध्याएं ही उसकी जड़े हैं, वेद उसकी शाखाएं है और सभी धर्म कर्म उसके पत्ते हैं। इसलिए यत्नपूर्वक मूल अर्थात् सन्ध्या की ही रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि मूल के कट जाने पर न तो वृक्ष रहता है न शाखा।

गायत्री जप से पूर्व 24 मुद्राओं का प्रदर्शन

जप करने से पूर्व माला को जल का छींटा लगाकर तिलक लगाकर प्रार्थना करें।

माला प्रार्थना-

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्ति स्वरूपिणि!।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव॥1॥

अविघ्नं कुरु माले! त्वं गृह्णामिदक्षिणे करे।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये॥2॥

गायत्री जप से पूर्व एकान्त में गायत्री मन्त्र या गायत्री प्रतिमा के आगे लिखित चौबीस मुद्राएं प्रदर्शित करें। किसी के सामने इन मुद्राओं का प्रदर्शन न करें।

16. **प्रलम्बम्**-अँगुलियों को थोड़ा मोड़ दोनों हाथों को उल्टा कर नीचे की ओर करें।
17. **मुष्टिकम्**-दोनों अँगूठे ऊपर रख दोनों मुट्ठी बाँध मिलावे।
18. **मत्स्यः**-दाहिने हाथ की पीठ पर बायाँ हाथ रखकर दोनों अँगूठे मिलावें।
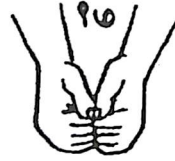
प्रलम्बम्　　मुष्टिकम्　　मत्स्यः

19. **कूर्म**-सीधे (चित्त) बाँयें हाथ की मध्यमा, अनामिका तथा कनिष्ठिका मोड़कर उल्टे दाहिने हाथ की मध्यमा अनामिका को उन तीनों अँगुलियों के नीचे देकर बाँयी तर्जनी पर, दाहिनी कनिष्ठिका और बाँये अँगूठे पर दाहिनी तर्जनी रक्खें।
20. **वराहकम्**-दाहिनी तर्जनी को बाँयें अँगूठे से मिला, दोनों हाथों की अँगुलियों को आपस में बाँधें।
21. **सिंहाक्रान्तम्**-दोनों हाथों को कानों के पास करें।

कूर्म　　वराहकम्　　सिंहाक्रान्तम्

22. **महाक्रान्तम्**-दोनों हाथों की अँगुलियों को कानों के सामने करें।
23. **मुद्गरम्**-मुट्ठी बाँध दाहिने हाथ की कुहनी को बाँयें हाथ की हथेली पर करें।
24. **पल्लवम्**-दाहिने हाथ की अँगुलियों को मुँह के सामने हिलावें।

इस प्रकार ये 24 मुद्रायें चित्रों की सहायकता से करनी चाहिए।

महाक्रान्तम्   मुद्गरम्   पल्लवम्

गायत्री-जप के बाद की आठ मुद्राएँ

जपान्तेऽष्टौ मुद्राः

सुरभिर्ज्ञान-वैराग्ये योनिः कूर्मोऽथ पङ्कजम्।
लिङ्गं निर्वाणकं चैव जपान्तेऽष्टौ प्रदर्शयेत्॥

1. **सुरभिः**-दोनों हाथों की अँगुलियाँ गूँथकर बाँये हाथ की तर्जनी से दाहिने हाथ की मध्यमा, मध्यमा से तर्जनी, अनामिका से कनिष्ठा औन कनिष्ठा से अनामिका अँगुली मिलावें।

2. **ज्ञानम्**-दाहिने हाथ की तर्जनी से अँगूठा मिलाकर हृदय में तथा इसी प्रकार बायाँ हाथ बाँयें पैर पर सीधा रक्खें।

3. **वैराग्यम्**-दोनों तर्जनियों से अँगूठा मिलाकर पैर पर सीधा रखें।

सुरभि   ज्ञानम्   वैराग्यम्

4. **योनिः**-दोनों मध्यमाओं के नीचे से बाँयीं तर्जनी के ऊपर दाहिनी अनामिका और दाहिनी तर्जनी पर बाँयीं अनामिका रख दोनों तर्जनियों से बाँध दोनों मध्यमाओं को सीधा करें। पश्चात् दोनों अँगूठे मध्यमाओं पर रखें।

5. **शंखः**-बाँये अँगूठे को दाहिनी मुट्ठी में बाँध दाहिने अँगूठे से बायीं अँगुलियों को मिलावें।

6. **पंचकम्**-दोनों हाथों के अँगूठे तथा अँगुलियों को मिलाकर ऊपर की ओर करें।

योनिः शंखः पंचकम्

7. **लिङ्गम्**-दाहिने अँगूठे को सीधा रखते हुए दोनों हाथों की अँगुलियों को गूँथकर बायाँ अँगूठा दाहिने अँगूठे की जड़ के ऊपर रखें।

8. **निर्वाणम्**-उल्टे बाँये हाथ पर दाहिना हाथ सीधा रख अँगुलियों को परस्पर गूँथ दोनों हाथ अपनी तरफ से घुमा, दोनों तर्जनियों को सीधा कान के समीप करें।
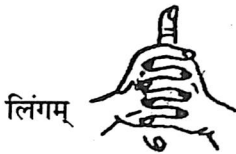
लिंगम्

निर्वाणम्

संध्योपासनविधि

ब्राह्म मुहूर्त में जब चार घड़ी रात बाकी रहे, शयन से उठकर भगवान् का स्मरण करें; फिर शौच-स्नान के अनन्तर शुद्ध वस्त्र धारण करके पवित्र तथा एकान्त-स्थान में कुश अथवा कम्बल आदि के आसन पर पूर्व, ईशान अथवा उत्तर दिशा की ओर मुँह करके बैठे। [तीनों काल की संध्या में उपर्युक्त दिशाओं की ओर ही मुँह करके बैठना चाहिये, केवल सूर्यार्घ्यदान, सूर्योपस्थान और गायत्री जप सूर्याभिमुख होकर करना आवश्यक है।] बायें हाथ में तीन कुश और दायें हाथ में दो कुशों की बनी हुई पवित्री **'ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्यते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्।'** इस मन्त्र से धारण करे। कुश के अभाव में सोने, चाँदी अथवा ताँबे की अँगूठी पहनकर भी कार्य किया जा सकता है। ॐकार और व्याहृतियों सहित गायत्री-मन्त्र का उच्चारण करके शिखा बाँध ले, यदि पहले से ही शिखा बँधी हो तो उसका स्पर्श मात्र कर ले। एक जोड़ा शुद्ध यज्ञोपवीत धारण किये रहना आवश्यक है। देह पर धौत वस्त्र के अतिरिक्त एक उत्तरीय वस्त्र (चादर या गमछा आदि) डाले रहना चाहिये। उत्तरीय वस्त्र के अभाव में एक और यज्ञोपवीत (कुल मिलाकर तीन यज्ञोपवीत) धारण किये रहे। फिर किसी पात्र में शुद्ध जल रखकर उसे बायें हाथ में उठा ले और दायें हाथ के कुश से अपने शरीर पर जल सींचते हुए निम्नाङ्कित मन्त्र पढ़े-

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

'मनुष्य अपवित्र हो या पवित्र अथवा किसी भी दशा में स्थित हो, जो पुण्डरीकाक्ष (कमलनयन) भगवान् विष्णु का स्मरण करता है, वह बाहर और भीतर सब ओर से शुद्ध हो जाता है।'

फिर नीचे लिखे मन्त्र से आसन पर जल छिड़ककर दायें हाथ से उसका स्पर्श करे–

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम्॥

'हे पृथ्वी देवि! तुमने सम्पूर्ण लोकों को धारण कर रखा है और भगवान् विष्णु ने तुम्हें धारण किया है। हे देवि! तुम मुझे धारण करो और मेरे आसन को पवित्र कर दो।'

इसके बाद यथा रुचि शास्त्रानुकूल भस्म, चन्दन आदि का तिलक करे।

तत्पश्चात् '**ॐ केशवाय नमः स्वाहा**', '**ॐ नारायणाय नमः स्वाहा**', '**ॐ माधवाय नमः स्वाहा**'–इन तीनों मन्त्रों को पढ़कर प्रत्येक से एक-एक बार [कुल तीन बार] पवित्र जल से आचमन करे [आचमन के समय हाथ जानुओं के भीतर हो, पूर्व ईशान या उत्तर दिशा की ओर ही मुख हो। ब्राह्मण इतना जल पीये जो हृदय तक पहुँच सके, क्षत्रिय इतना ही जल ग्रहण करे जो कण्ठ तक पहुँच सके, वैश्य इतना जल ले जो तालु तक जा सके। उस समय ओठ बहुत न खोले, अङ्गुलियाँ परस्पर सटी रहें। अङ्गुष्ठ और कनिष्ठिका अलग रहें। खड़ा न हो, हँसता न रहे। जल में फेन या बुलबुले आदि न हों]। ब्राह्मतीर्थ से तीन बार आचमन करने के पश्चात् '**ॐ गोविन्दाय नमः**' यह मन्त्र पढ़कर हाथ धो ले। इसके बाद दो बार अँगूठे के मूल से ओठ को पोंछे, फिर हाथ धो ले। अँगूठे का मूल ब्राह्मतीर्थ है। तत्पश्चात् भीगी हुई अङ्गुलियों से मुख आदि का स्पर्श करे। मध्यमा-अनामिका से मुख, तर्जनी-अङ्गुष्ठ से नासिका, मध्यमा-अङ्गुष्ठ से नेत्र, अनामिका-अङ्गुष्ठ से कान, कनिष्ठिका-अङ्गुष्ठ से नाभि, दाहिने हाथ से हृदय, सब अङ्गुलियों से सिर, पाँचों अङ्गुलियों से दाहिनी बाँह और बायीं बाँह का स्पर्श करना चाहिये।

तदनन्तर हाथ में जल लेकर निम्नाङ्कित संकल्प पढ़कर वह जल भूमि पर गिरा दे–

हरिः ॐ तत्सदद्यैतस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे

भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते पुण्यक्षेत्रे कलियुगे कलिप्रथमचरणे अमुक संवत्सरे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा अहं ममोपात्तदुरितक्षयपूर्वकं श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं प्रातः [सायं अथवा मध्याह्न]-संध्योपासनं करिष्ये।

इसके बाद निम्नाङ्कित विनियोग पढ़े—

ऋतं चेति त्र्यृचस्य माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप् छन्दो भाववृत्तं दैवतमपामुपस्पर्शने विनियोगः।

फिर नीचे लिखे मन्त्र को एक बार पढ़कर एक ही बार आचमन करे—

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत। ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः॥ (ऋ. अ. 8, अ. 8, व. 48)

[महाप्रलय के बाद इस महाकल्प के आरम्भ में] सब ओर से प्रकाशमान तपरूप परमात्मा से ऋत (सत्संकल्प) और सत्य (यथार्थ भाषण)-की उत्पत्ति हुई। उसी परमात्मा से रात्रि-दिन प्रकट हुए तथा उसी से जलमय समुद्र का आविर्भाव हुआ। जलमय समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् दिनों और रात्रियों को धारण करने वाला काल स्वरूप संवत्सर प्रकट हुआ जो कि पलक मारने वाले जङ्गम प्राणियों और स्थावरों से युक्त समस्त संसार को अपने अधीन रखने वाला है। इसके बाद सबका धारण करने वाले परमेश्वर ने सूर्य, चन्द्रमा, दिव् (स्वर्गलोक), पृथिवी, अन्तरिक्ष तथा महर्लोक आदि लोकों की भी पूर्वकल्प के अनुसार सृष्टि की।

तदनन्तर प्रणवपूर्वक गायत्री-मन्त्र पढ़कर रक्षा के लिये अपने चारों ओर जल छिड़के। फिर नीचे लिखे विनियोग को पढ़े—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपङ्क्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्यबृहस्पति-वरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता, आपोज्योतिरिति शिरसः प्रजापतिर्ऋषिर्यजुश्छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्या देवताः प्राणायामे विनियोगः।

इसके पश्चात् आँखें बंद करके नीचे लिखे मन्त्र से प्राणायाम करे। उसकी विधि इस प्रकार है—'पहले दाहिने हाथ के अँगूठे से नासिका का दायाँ छिद्र बंद करके बायें छिद्र से वायु को अंदर खींचे, साथ ही नाभिदेश में नीलकमल दल के

समान श्यामवर्ण चतुर्भुज भगवान् विष्णु का ध्यान करते हुए प्राणायाम-मन्त्र का तीन बार पाठ कर जाय। [यदि तीन बार मन्त्र-पाठ न हो सके तो एक ही बार पाठ करे और अधिक के लिये अभ्यास बढ़ावे।] इसे पूरक कहते हैं। पूरक के पश्चात् अनामिका और कनिष्ठिका अङ्गुलियों से नासिका के बायें छिद्र को भी बंद करके तब तक श्वास को रोके रहे, जब तक कि प्राणायाम-मन्त्र का तीन बार [या शक्ति के अनुसार एक बार] पाठ न हो जाय। इस समय हृदय के बीच कमल के आसन पर विराजमान अरुण-गौर-मिश्रित वर्ण वाले चतुर्मुख ब्रह्माजी का ध्यान करें। यह कुम्भक क्रिया है। इसके बाद अँगूठा हटाकर नासिका के दाहिने छिद्र से वायु को धीरे-धीरे तब तक बाहर निकालें, जब तक प्राणायाम-मन्त्र का तीन [या एक] बार पाठ न हो जाय। इस समय शुद्ध स्फटिक के समान श्वेत वर्ण वाले त्रिनेत्रधारी भगवान् शंकर का ध्यान करें। यह रेचक-क्रिया है। यह सब मिलकर एक प्राणायाम कहलाता है।

प्राणायाम का मन्त्र यह है-

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्।। (तै. आ. प्र. 10 अ. 27)

हम स्थावर-जङ्गम रूप सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते हैं, जो कि हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते हैं और जो भूर्, भुवर्, स्वर्, महर्, जन, तप और सत्य नाम वाले समस्त लोकों में व्याप्त हैं तथा जो सच्चिदानन्द स्वरूप जल रूप से जागत् का पालन करने वाले, अनन्त तेज के धाम, रसमय, अमृतमय और भूर्भुवःस्वः-स्वरूप (त्रिभुवनात्मक ब्रह्म हैं।)

फिर आगे लिखा विनियोग पढ़े-

सूर्यश्च मेति नारायण ऋषिः प्रकृतिश्छन्दः सूर्यमन्युमन्युपतयो रात्रिश्च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

तत्पश्चात् निम्नाङ्कित मन्त्र को पढ़कर एक बार आचमन करे-

ॐ सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यद्रात्र्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु। यत्किञ्च दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा।। (तै. आ. प्र. 10 अ. 25)

सूर्य, क्रोध के अभिमानी देवता और क्रोध के स्वामी—ये सभी क्रोधवश किये हुए पापों से रक्षा करें [अर्थात् कृत पापों को नष्ट करके होने वाले पापों से बचावें]। रात में मैंने मन, वाणी, हाथ, पैर, उदर और शिश्न (उपस्थ) इन्द्रिय से जो पाप किये हों, उन सबको रात्रिकालाभिमानी देवता नष्ट करें। जो कुछ भी पाप मुझमें वर्तमान है, इसे ओर इसके कर्तृत्व का अभिमान रखने वाले अपने को मैं मोक्ष के कारणभूत प्रकाशमय सूर्यरूप परमेश्वर में हवन करता हूँ [अर्थात् हवन के द्वारा अपने समस्त पाप और अहंकार को भस्म करता हूँ]। इसका भलीभाँति हवन हो जाय।

उपर्युक्त आचमन-मन्त्र प्रातःकाल की संध्या का है। मध्याह्न और सायंकाल के केवल आचमन-मन्त्र प्रातःकाल से भिन्न हैं।

मध्याह्न का विनियोग और मन्त्र इस प्रकार है—

आपः पुनन्त्विति नारायण ऋषिरनुष्टुप् छन्द आपः पृथिवी ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्म च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

इस विनियोग को पढ़े। फिर नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर एक बार आचमन करे—

ॐ आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्टमभोज्यं यद्वा दुश्चरितं मम। सर्वं पुनन्तु मामापोऽसतां च प्रतिग्रहꣳस्वाहा॥ (तै. आ. प्र. 10 अ. 23)

जल पृथिवी को [प्रोक्षण आदि के द्वारा] पवित्र करे। पवित्र हुई पृथ्वी मुझे पवित्र करे। वेदों के प्रति परमात्मा मुझे शुद्ध करें। मैंने जो कभी किसी भी प्रकार का उच्छिष्ट या अभक्ष्य भक्षण किया हो अथवा इसके अतिरिक्त भी मेरे जो पाप हों, उन सबको दूर करके जल मुझे शुद्ध कर दे तथा नीच पुरुषों से लिये हुए दानरूप दोष को भी दूर करके जल मुझे पवित्र करे। पूर्वोक्त सभी दोषों का भलीभाँति हवन हो जाय।

सायंकाल के आचमन का विनियोग और मन्त्र इस प्रकार है—

अग्निश्च मेति नारायण ऋषिः प्रकृतिश्छन्दोऽग्निमन्युमन्युपतयोऽहश्च देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

इस विनियोग को पढ़े। फिर नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर एक बार आचमन करे—

ॐ अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्ताम्। यदह्ना पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु।

यत्किञ्च दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥ (तै. आ. प्र. 10 अ. 24)

अग्नि, क्रोध के अभिमानी देवता और क्रोध के स्वामी—ये सभी क्रोधवश किये हुए पापों से मेरी रक्षा करें [अर्थात् कृत पापों को नष्ट करके होने वाले पापों से बचावें]। मैंने दिन में मन, वाणी, हाथ, पैर, उदर और शिश्न (उपस्थ) इन्द्रिय से जो पाप किये हों उन सबको दिन के अभिमानी देवता नष्ट करें। जो कुछ भी पाप मुझमें वर्तमान है, इसे तथा इसके कर्तृत्व का अभिमान रखने वाले अपने को मैं मोक्ष के कारणभूत सत्य स्वरूप प्रकाशमय परमेश्वर में हवन करता हूँ [अर्थात् हवन के द्वारा अपने सारे पाप और अहंकार को भस्म करता हूँ]। इसका भलीभाँति हवन हो जाय।

फिर निम्नाङ्कित विनियोग को पढ़े—

आपो हि ष्ठेति त्र्यृचस्य सिन्धुद्वीप ऋषिर्गायत्री छन्द आपो देवता मार्जने विनियोगः।

इसके पश्चात् निम्नाङ्कित तीन ऋचाओं के नौ चरणों में से सात चरणों को पढ़ते हुए सिर पर जल सींचे, आठवें से पृथ्वी पर जल डाले और फिर नवें चरण को पढ़कर सिर पर ही जल सींचे। यह मार्जन तीन कुशों अथवा तीन अङ्गुलियों से करना चाहिये। मार्जन-मन्त्र ये हैं—

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवः। ॐ ता न ऊर्जे दधातन। ॐ महेरणाय चक्षसे। ॐ यो वः शिवतमो रसः। ॐ तस्य भाजयतेह नः। ॐ उशतीरिव मातरः। ॐ तस्मा अरं गमाम वः। ॐ यस्य क्षयाय जिन्वथ। ॐ आपो जनयथा च नः। (यजु. अ. 11 मन्त्र 50, 51, 52)

हे जल! तुम निश्चय ही कल्याणकारी हो, अतः [अन्नादि रसों के द्वारा] बल की वृद्धि के लिये तथा अत्यन्त रमणीय परमात्म दर्शन के लिये तुम हमारा पालन करो। जिस प्रकार पुत्रों की तुष्टि चाहने वाली माताएँ उन्हें अपने स्तनों का दुग्ध पान कराती हैं, उसी प्रकार तुम्हारा जो परम कल्याणमय रस है उसके भागी हमें बनाओ। हे जल! जगत् के जीवनाधारभूत जिस रस के एक अंश से तुम समस्त विश्व को तृप्त करते हो, उस रस की पूर्णता को हम प्राप्त हों [अर्थात् उस रस से हम पूर्णतया तृप्ति लाभ करें।] हे जल! तुम हमें उस रस के भोक्ता बनाओ [अर्थात् उसे भोगने की क्षमता दो]।

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग को पढ़े—

द्रुपदादिवेत्यश्विसरस्वतीन्द्रा ऋषयोऽनुष्टुप् छन्द आपो देवताः शिरस्सेके विनियोगः।

फिर बायें हाथ में जल लेकर उसे दाहिने हाथ से ढक लें और नीचे लिखे मन्त्र से अभिमन्त्रित करके उसे सिर पर छिड़क ले—

ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः। (यजु. अ. 20, मन्त्र. 20)

जैसे पादुका से अलग होता हुआ मनुष्य पादुका के मलादि दोषों से मुक्त हो जाता है, जिस प्रकार पसीने से भीगा हुआ पुरुष स्नान करने के पश्चात् मैल से रहित होता है तथा जैसे पवित्रक आदि से भी शुद्ध हो जाता है, उसी प्रकार जल मुझे पापों से शुद्ध करे [अर्थात् मुझे सर्वथा निष्पाप कर दे]।

पुनः निम्नाङ्कित विनियोग-वाक्य को पढ़े—

ऋतञ्चेति त्र्यृचस्य माधुच्छन्दसोऽघमर्षण ऋषिरनुष्टुप् छन्दो भाववृत्तं दैवतमघमर्षणे विनियोगः।

फिर दाहिने हाथ में जल लेकर नासिका में लगावे और [यदि सम्भव हो तो श्वास रोककर] नीचे लिखे मन्त्र को तीन बार या एक बार पढ़ते हुए मन-ही-मन यह भावना करे कि यह जल नासिका के बायें छिद्र से भीतर घुसकर अन्तःकरण के पाप को दायें छिद्र से निकाल रहा है, फिर उस जल की ओर दृष्टि न डालकर बायीं और फेंक दे [अथवा वामभाग में शिला की भावना करके उस पर उस पाप को पटककर नष्ट कर देने की भावना करे]।

अघमर्षण-मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत। ततः समुद्रो अर्णवः। समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः॥ (ऋ. अ. 8 अ. 8 व. 48)

इसके पश्चात् नीचे लिखे विनियोग-वाक्य का पाठ करे—

अन्तश्चरसीति तिरश्चीन ऋषिरनुष्टुप् छन्द आपो देवता अपामुपस्पर्शने विनियोगः।

फिर आगे लिखा मन्त्र पढ़कर एक बार आचमन करे—

ॐ अन्तश्चरसि भूतेषु गुहायां विश्वतोमुखः।

त्वं यज्ञस्त्वं वषट्कार आपो ज्योती रसोऽमृतम्॥

(कात्यायनपरिशिष्टसूत्र)

'हे जल रूप परमात्मन्! तुम समस्त प्राणियों के भीतर उनकी हृदयरूप गुहा में विचरते हो, तुम्हारा सब ओर मुख है; तुम्हीं यज्ञ हो, तुम्हीं वषट्कार (इन्द्रादि का भाग हविष्य) हो और तुम्हीं जल, प्रकाश, रस एवं अमृत हो।'

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य का पाठमात्र करे—

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता, तिसृणां महाव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः, तत्सवितुरिति विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता सूर्यार्घ्यदाने विनियोगः।

फिर सूर्य के सामने एक चरण की एँड़ी (पिछला भाग) उठाये हुए अथवा एक पैर से खड़ा होकर या एक पैर के आधे भाग से खड़ा हो ॐकार और व्याहृतियों सहित गायत्री-मन्त्र को तीन बार पढ़कर पुष्प मिले हुए जल से सूर्य को तीन बार अर्घ्य दे। प्रातः और मध्याह्न का अर्घ्य जल में देना चाहिये। यदि जल न हो तो स्थल को भलीभाँति जल से धोकर उसी पर अर्घ्य का जल गिरावे; परन्तु सायंकाल का अर्घ्य कदापि जल में न दे। खड़ा होकर अर्घ्य देने का नियम केवल प्रातः और मध्याह्न की संध्या में है; सायंकाल में तो बैठकर भूमि पर ही अर्घ्य-जल गिराना चाहिये। मध्याह्न की संध्या में एक ही बार अर्घ्य देना चाहिये और प्रातः एवं सायं-संध्या में तीन-तीन बार सूर्यार्घ्य देने का मन्त्र [अर्थात् प्रणव-व्याहृति सहित गायत्री-मन्त्र] इस प्रकार है—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

इस मन्त्र को पढ़कर '**ब्रह्मस्वरूपिणे सूर्यनारायणाय इदमर्घ्यं दत्तं न मम**' ऐसा कहकर प्रातःकाल अर्घ्य समर्पण करे।

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य को पढ़े—

उद्वयमिति प्रस्कण्व ऋषिरनुष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता, उदुत्यमिति प्रस्कण्व ऋषिर्निचृद्गायत्री छन्दः सूर्यो देवता, चित्रमिति कुत्साङ्गिरस ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता, तच्चक्षुरिति दध्यङ्ङाथर्वण ऋषिरेकाधिका ब्राह्मी त्रिष्टुप्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः।

तदनन्तर प्रातःकाल खड़ा होकर और सायंकाल बैठे हुए ही अञ्जलि बाँधकर तथा मध्याह्न काल में खड़ा हो दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर [यदि सम्भव हो तो] सूर्य

की ओर देखते हुए **'उद्वयम्'** इत्यादि चार मन्त्रों को पढ़कर उन्हें प्रणाम करें। फिर अपने स्थान पर ही सूर्यदेव की एक बार प्रदक्षिणा करते हुए उन्हें नमस्कार करके बैठ जाय। [मध्याह्न काल में गायत्री-मन्त्र, विभ्राट्-अनुवाक, पुरुषसूक्त, शिवसंकल्प और मण्डल ब्राह्मण का भी यथा सम्भव पाठ करना चाहिये]।

ॐ उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ (यजु. अ. 20 मन्त्र 21)

हम अन्धकार से ऊपर उठकर उत्तम स्वर्गलोक को तथा देवताओं में अत्यन्त उत्कृष्ट सूर्यदेव को भलीभाँति देखते हुए उस सर्वोत्तम ज्योतिर्मय परमात्मा को प्राप्त हों।

ॐ उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वास सूर्यम्॥ (यजु. अ. 7 मन्त्र 41)

उत्पन्न हुए समस्त प्राणियों के ज्ञाता उन सूर्यदेव को छन्दोमय अश्व सम्पूर्ण जगत् को उनका दर्शन कराने [या दृष्टि प्रदान करने] के लिये ऊपर-ही-ऊपर शीघ्र गति से लिये जा रहे हैं।

ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीं अन्तरिक्षꣳसूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च॥ (यजु. अ. 7 मन्त्र 42)

जो तेजोमयी किरणों के पुञ्ज हैं, मित्र, वरुण तथा अग्नि आदि देवताओं एवं समस्त विश्व के नेत्र हैं और स्थावर तथा जङ्गम-सबके अन्तर्यामी आत्मा हैं, वे भगवान् सूर्य आकाश, पृथ्वी और अन्तरिक्षलोक को अपने प्रकाश से पूर्ण करते हुए आश्चर्यरूप से उदित हुए हैं।

ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳशृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ (यजु. अ. 36 मन्त्र 24)

देवता आदि सम्पूर्ण जगत् का हित करने वाले और सबके नेत्र रूप वे तेजोमय भगवान् सूर्य पूर्व दिशा से उदित हो रहे हैं। [उनके प्रसाद से] हम सौ वर्षों तक देखते रहें, सौ वर्षों तक जीते रहें, सौ वर्षों तक सुनते रहें, सौ वर्षों तक हम में बोलने की शक्ति रहे तथा सौ वर्षों तक हम कभी दीन-दशा को न प्राप्त हों। इतना ही नहीं; सौ वर्षों से अधिक काल तक भी हम देखें, जीवें, सुनें, बोलें एवं कभी दीन न हों।

इसके बाद-

तेजोऽसीति धामनामासीत्यस्य च परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्यजुस्त्रिष्टुबृगुष्णिहौ

छन्दसी सविता देवता गायत्र्यावाहने विनियोगः।

इस विनियोग को पढ़कर निम्नाङ्कित मन्त्र से विनयपूर्वक गायत्री देवी का आवाहन करे–

ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि। धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजन-मसि॥ (यजु. अ. 1/31)

हे सूर्य स्वरूपा गायत्री देवि! तुम देदीप्यमान तेजोमयी हो, शुद्ध हो और अमृत (नित्य ब्रह्मरूपा) हो। तुम्हीं परम धाम और नामरूपा हो। तुम्हारा किसी से भी पराभव नहीं होता। तुम देवताओं की प्रिय और उनके यजन की साधनभूता हो [मैं तुम्हारा आवाहन करता हूँ]।

फिर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य को पढ़ें–

गायत्र्यसीति विवस्वान् ऋषिः स्वराणमहापङ्क्तिश्छन्दः परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोगः।

तत्पश्चात् नीचे लिखे मन्त्र से गायत्री को प्रणाम करें–

ॐ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपदसि न हि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसेऽसावदो मा प्रापत्॥ (बृहदारण्यक. 5।14।7)

हे गायत्रि! तुम त्रिभुवन रूप प्रथम चरण से एकपदी हो, ऋक्, यजुः एवं सामरूप द्वितीय चरण से द्विपदी हो। प्राण, अपान तथा व्यानरूप तृतीय चरण से त्रिपदी हो और तुरीय ब्रह्मरूप चतुर्थ चरण से चतु ्पदी हो। निर्गुण स्वरूप से अचिन्त्य होने के कारण तुम 'अपद' हो [इसीलिये वेद 'नेति-नेति' कहकर तुम्हारे स्वरूप का वर्णन करते हैं]। अतएव मन-बुद्धि के अगोचर होने से तुम सबके लिये प्राप्य नहीं हो। तुम्हारे दर्शनीय (अनुभव करने योग्य) चतुर्थ पद को, जो प्रपञ्च से परे वर्तमान शुद्ध परब्रह्म रूप है, नमस्कार है। तुम्हारी प्राप्ति में विघ्न डालने वाले वे राग-द्वेष, काम-क्रोध आदि रूप पाप मेरे पास न पहुँच सकें [अर्थात् परब्रह्म स्वरूपिणी तुम्हें मैं निर्विघ्न प्राप्त करूँ]।

इसके अनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य को पढ़ें–

ॐकारस्य ब्रह्म ऋषिर्दैवी गायत्री छन्दः परमात्मा देवता, तिसृणां महा-व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांस्यग्निवायुसूर्या देवताः तत्सवितुरिति विश्वामित्रऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता जपे विनियोगः।

फिर नीचे लिखे अनुसार गायत्री-मन्त्र का कम-से-कम 108 बार माला आदि से गिनते हुए जप करें। अधिक जहाँ तक हो अच्छा है। जप के समय गायत्री के

तेजोमय स्वरूप का ध्यान और मन्त्र के अर्थ का अनुसंधान होता रहे तो बहुत ही उत्तम है। गायत्री-मन्त्र इस प्रकार है—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ। (यजु. अ. 36 मन्त्र 3)

हम स्थावर-जङ्गम रूप सम्पूर्ण विश्व को उत्पन्न करने वाले उन निरतिशय प्रकाशमय परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते हैं तथा जो भूर्लोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक रूप सच्चिदानन्दमय परब्रह्म हैं।

तदनन्तर नीचे लिखे विनियोग-वाक्य का पाठ करे—

विश्वतश्चक्षुरिति भौवन ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो विश्वकर्मा देवता सूर्यप्रदक्षिणायां विनियोगः।

फिर नीचे लिखे मन्त्र से अपने स्थान पर खड़े होकर सूर्य देव की एक बार प्रदक्षिणा करें—

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्।
सम्बाहुभ्यां धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः॥

(यजु. अ. 17 मन्त्र 19)

वे एकमात्र परमात्मा पृथ्वी और आकाश की रचना करते समय धर्माधर्मरूप भुजाओं और पतनशील पञ्च महाभूतों से संगत होते अर्थात् काम लेते हैं। तात्पर्य यह कि धर्माधर्मरूप निमित्त और पञ्चभूतरूप उपादान कारणों से अन्य साधन की सहायता लिये बिना ही सबकी सृष्टि करते हैं। उनके सब ओर नेत्र हैं, सब ओर मुख हैं, सब ओर भुजाएँ हैं और सब ओर चरण हैं [अर्थात् सर्वत्र उनकी सभी इन्द्रियाँ हैं, अथवा सब प्राणी परमेश्वर के स्वरूप हैं; अतः उनके जो नेत्र आदि हैं, वे उनमें व्याप्त परमात्मा के नेत्र आदि हैं]।

इसके पश्चात् बैठकर निम्नाङ्कित विनियोग का पाठ करें—

ॐ देवा गातुविद इति मनसस्पतिर्ऋषिर्विराडनुष्टुप्छन्दो वातो देवता जपनिवेदने विनियोगः।

फिर—

ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्त्वा गातुमित मनसस्पत इमं देव यज्ञꣳस्वाहा व्वाते धाः। (यजु. अ. 2 मन्त्र 21)

'हे यज्ञवेत्ता देवताओ! आप लोग हमारे इस जपरूपी यज्ञ को पूर्ण हुआ जानकर अपने गन्तव्य मार्ग को पधारें। हे चित्त के प्रवर्तक परमेश्वर! मैं इस जप-यज्ञ को आपके हाथ में अर्पण करता हूँ। आप इसे वायुदेवता में स्थापित करें।'

इस मन्त्र को पढ़कर नमस्कार करने के अनन्तर–

अनेन यथाशक्तिकृतेन गायत्रीजपाख्येन कर्मणा भगवान् सूर्यनारायणः प्रीयतां न मम।

यह वाक्य पढ़ें। इसके बाद–

उत्तमे शिखरे इति वामदेव ऋषिरनुष्टुप्छन्दः गायत्री देवता गायत्रीविसर्जने विनियोगः।

इस विनियोग को पढ़कर–

ॐ उत्तमे शिखरे देवी भूम्यां पर्वतमूर्धनि।
ब्राह्मणेभ्योऽभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम्।। (तै.आ.प्र. 10 अ. 30)

'हे गायत्री देवि! अब तुम अपने उपासक ब्राह्मणों के पास से उनकी अनुमति लेकर भूमि पर स्थित जो मेरु नामक पर्वत है, उसकी चोटी पर विद्यमान जो सुरम्य शिखर है, वही तुम्हारा वास स्थान है; उसमें निवास करने के लिये सुखपूर्वक जाओ।'

इस मन्त्र को पढ़कर गायत्री देवी का विसर्जन करें, फिर निम्नाङ्कित वाक्य पढ़कर यह संध्योपासनकर्म परमेश्वर को समर्पित करें–

अनेन संध्योपासनाख्येन कर्मणा श्रीपरमेश्वरः प्रीयतां न मम। ॐ तत्सद्-ब्रह्मार्पणमस्तु।

फिर भगवान् का स्मरण करे–

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु।
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।

श्री विष्णवे नमः।। श्रीविष्णवे नमः।।

।। श्रीविष्णुस्मरणात्परिपूर्णतास्तु ।।

माहात्म्यसहित संध्याकालनिर्णय

उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका।
कनिष्ठा सूर्यसहिता प्रातःसंध्या त्रिधा स्मृता।।1।।

मध्या मध्याह्ने।।2।।

उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमा लुप्तभास्करा।
कनिष्ठा तारकोपेता सायंसंध्या त्रिधा स्मृता।।3।।

(देवीभागवत 11।16।6)

'जो द्विज संध्या नहीं जानता और संध्योपासन नहीं करता वह जीता हुआ ही अधम हो जाता है और मरने पर कुत्ते की योनि को प्राप्त होता है।'

सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु।
यदन्यत् कुरुते कर्म न तस्य फलभाग्भवेत्।। (दक्षस्मृति 2।20)

'संध्याहीन द्विज नित्य ही अपवित्र है और सम्पूर्ण धर्म कार्य करने में अयोग्य है। वह जो कुछ अन्य कर्म करता है उसका फल उसे नहीं मिलता।'

सन्ध्यामुपासते ये तु सततं शंसितव्रताः।
विधूतपापास्ते यान्ति ब्रह्मलोकं सनातनम्।। (अत्रि)

'जो प्रशंसितव्रती सदा संध्योपासन करते हैं, उनके पाप नष्ट हो जाते हैं और वे सनातन ब्रह्मलोक को प्राप्त करते हैं।'

यावन्तोऽस्यां पृथिव्यां हि विकर्मस्थास्तु वै द्विजाः।
तेषां वै पावनार्थाय सन्ध्या सृष्टा स्वयम्भुवा।। (याज्ञवल्क्य)

'इस पृथ्वी पर निषिद्ध कर्म करने वाले जितने भी द्विज अर्थात्–ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हैं उन सबको पवित्र करने के लिये स्वयं ब्रह्मा जी ने संध्या का निर्माण किया।'

निशायां वा दिवा वापि यदज्ञानकृतं भवेत्।
त्रिकालसन्ध्याकरणात् तत्सर्वं हि प्रणश्यति।। (याज्ञवल्क्य)

'रात में या दिन में जिस किसी समय अज्ञान के कारण जो भी अनुचित कर्म घटित हो जाते हैं, वे सब त्रिकाल-संध्या करने से नष्ट हो जाते हैं।'

सन्ध्यालोपस्य चाकर्ता स्नानशीलश्च यः सदा।
तं दोषा नोपसर्पन्ति गरुत्मन्तमिवोरगाः।। (कात्यायन)

'जो कभी संध्या का लोप नहीं करता अर्थात् नित्य संध्या करता है और जो सदा स्नानशील है, उसके पास दोष उसी तरह नहीं रहते जैसे गरुड के सांनिध्य में साँप।'

इसके बाद गायत्री मंत्र का जप करें–

गायत्री मन्त्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

गायत्रीमन्त्रार्थ

"तत्"

1. तत् यह अव्यय परोक्ष अर्थ के लिए आया है अर्थात् जो दिखाई दे। तत् शब्द मन्त्र में आए हुए (भर्ग) शब्द का विशेषण है। तत् शब्द से आत्म रूप स्वतः सिद्ध परब्रह्म कहा जाता है।
2. "ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः" ॐ, तत्, सत् यह ब्रह्म के तीन नाम हैं। तत्-उसका जो सब श्रुतियों में प्रसिद्ध है। (गीता 17/3)

"सवितुः"

1. "पुञ्" धातु प्राणि के उत्पन्न करने के अर्थ में है, "षु" धातु का अर्थ उत्पत्ति और ऐश्वर्य है।
2. जो सविता चराचर जगत् को उत्पन्न करता है वह सूर्य मण्डल के अन्तर्गत पुरुष ईश्वर है।
3. षू धातु का अर्थ प्रेरणा करना भी है।
4. "सविता वै प्रसवानामीशे" सम्पूर्ण सृष्टि का ईश्वर सविता है।
5. **सूर्याद्भवन्ति भूतानि सूर्येण पालितानितु।**
   सूर्ये लयं प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोऽहमेवच॥

   अर्थात् सूर्य भगवान् से सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति, पालन तथा संहार होता है, जो सूर्य का स्वरूप है वह निश्चय करके मैं ही हूँ।
6. **हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।**
   योऽसावादित्ये पुरुषः सोसावहम्॥

   अर्थात् तेजोमय ढकने से सत्यरूप परमात्मा का मुख ढका है जो पुरुष सूर्यमण्डल में है वही मैं हूँ।
7. छान्दोग्योपनिषद् मे कहा है कि जो सूर्यमण्डल में तेजोमय पुरुष सुवर्णश्मश्रु और केश वाला दिखाई पड़ता है वह नख से शिखा तक तेजोमय है।

8. सन्ध्याभाष्य में कहा है कि–"**सूते सकल जन दु:ख निवृत्ति हेतुं वृष्टिं जनयातीति सविता**"।

अर्थात्–सम्पूर्ण जनों की दु:खनिवृत्ति का कारण जो सृष्टि को उत्पन्न करे वह सविता (सूर्य भगवान् है) जिन किरणों से सूर्य भगवान् तपते हैं, उन्हीं किरणों के द्वारा जल खींचकर बादल रूप से वर्षा करते हैं। आदित्य (सूर्य) से ही वृष्टि, वृष्टि से अन्न और अन्न से प्रजा पैदा होती है।

"वरेण्यम्"

1. जो वर्णन करने के योग्य सर्वश्रेष्ठ है वही वरेण्य शब्द से कहा गया है। वरेण्यं में जो ण्य है अक्षर गणना के समय सातवां वर्ण जो ण्य है उसको गिनते समय दो वर्ण गिनने चाहिए-ण्य को णि+य समझना चाहिए, परन्तु जप में उच्चारण के समय पूर्व कथनानुसार ण्य ही पढ़ना चाहिए।

2. **वरेण्यं वरणीयञ्च संसार भयभीरुभि:।**
आदित्यान्तर्गतं यच्च भर्गाख्यं वा मुमुक्षुभि:। (यो० याज्ञ० 9/56-57)

अर्थात्–संसार के भय से डरे हुए पुरुषों से अथवा मुक्ति की इच्छा वाले जनों से आदित्य के अन्तर्गत जो भर्ग नाम वाला तेज है वह प्रार्थनीय है।

3. "**सर्वैरुपास्यतया ज्ञेयतया च सम्भजनीयम्**" समस्त प्राणियों के लिए उपास्य होने के कारण ज्ञेयभाव करके चिन्तन करने के योग्य है।

सवितुस्स्वात्म भूतन्तु वरेण्यं सर्व जन्तुभि:।

4. "**भजनीयं द्विजा भर्ग: तेजश्चैतन्य लक्षणम्**" सविता देव का आत्मरूप, समस्त जन्तुओं में प्रार्थनीय ऐसा जो भर्ग तेज, चैतन्य रूप है। वह द्विजों अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों द्वारा भजन करने के योग्य है सदैव प्रार्थनीय है।

"भर्ग:"

1. भञ्जो-आमर्दने, भृजी भर्जन इत्येतयोर्धात्वोर्भर्ग:।

2. भ्राज् दीप्तावित्यस्य धातोर्वाभर्ग: तेज इत्यर्थ: भञ्जधातु आमर्दन अर्थ में है और भ्राज्, धातु भजन अर्थ में है अर्थात् भजन करने वालों के पाप के भञ्जन का कारण होने से भर्ग नाम हुआ। जो भासित होता है, प्रदीप्त होता है, वह भर्ग है।

3. "**पापानां तापकं तेजो मण्डलम्**" अर्थात्–पापों को तपाने (नाश करने वाला) तेज रूप मण्डल भर्ग है। (सायन भाष्य)

4. **भर्ज्जन्ति नश्यन्ति पापानि संसार जन्म मरणादि दुःख भूतानि येन असौ भर्गः।** अर्थात्-पाप अर्थात् संसार रूपी जन्ममरणादि दुःख का मूल जिससे नष्ट हो वह भर्ग है। (सं० भा०)
5. **प्रकाशरूपं यत्प्रकाशेन सर्वप्रकाशः प्रकाशते** अर्थात् प्रकाश रूप जिसके प्रकाश से सब प्रकाशित है वह भर्ग है। (सं० भा०)
6. **"वीर्यं वै भर्ग इति"** निश्चय रूप से वल भर्ग है। (शतपथ ब्रा. 5/4/511)
7. **"तेजो वै ब्रह्म वर्चसम्"**। गायत्री तेजस्वी वर्चसी भवति। (ऐतरेय ब्राह्मण) निश्चय करके तेज ही ब्रह्म तेज है और गायत्री तेज स्वरूप है।

"देवस्य"

जो सर्व प्रकाशों में, आत्मा में, परमेश्वर में, देवताओं में देव शब्द घटित होता है।

1. **"सर्वद्योतनात्मकाखण्डचिदेक रसम्"** अर्थात्-सभी का प्रकाशक, अखण्ड, चैतन्य, एकरस "देव" का अर्थ है। (शंकर भाष्य)
2. **दीव्यते क्रीडते यस्माद्रोचते द्योतते दिवि।**
   तस्माद्देव इति प्रोक्तः स्तूयते सर्वदेवतैः॥

   (वृ० यो० याज्ञ० अ० 9/54 विद्यारण्य)

   अर्थात्-जिस कारण से स्वर्ग में क्रीडा करता है प्रकाश करता है, इस कारण देव कहा गया है, और जिसकी सब देवता स्तुति करते हैं।
3. **सर्वभूतेश्वात्मतया द्योतते स्तूयते स्तुत्यैः सर्वत्र गच्छति तस्माद्देवः।**

   (शब्दकल्पद्रुम)

   सब भूतों में आत्मारूप से प्रकाश करता है, स्तोत्रों से स्तुति किया जाता है वह सर्वत्र आत्म रूप से प्राप्त है इस कारण "देव" कहा जाता है।

"धीमहि"

1. **ध्यायामः। चिन्तयामः निगम निरुक्त विधान रूपेण चक्षुषा निदिध्यासं तद्विषयं कुर्म इति।** अर्थात्-निगम, निरुक्त विधान रूप नेत्र से चिन्तन करता हूँ अर्थात् तत्स्वरूप का ध्यान करता हूँ।
2. **ध्यातृध्येयव्यापाराभिन्नत्वमेव ध्यानम्।** अर्थात्-ध्यान करने वाले का ध्यान करने योग्य परमात्मा से अभेद होना ध्यान कहा जाता है।

3. **"ध्यानेन हेया वृत्तयः"** अर्थात्-ध्यान से वृत्तियों का त्याग करना चाहिए।
4. **ध्यानेन लभते मोक्षं मोक्षेण लभते सुखम्।**
   सुखेनानन्दवृद्धिः स्यादानन्दो ब्रह्म विग्रहः॥
   अर्थात्-रुद्रयामलोत्तर तन्त्र के अनुसार-ध्यान से मोक्ष, मोक्ष से सुख प्राप्त होता है, सुख से आनन्द की वृद्धि होती है और आनन्द ही ब्रह्म मूर्ति है।
5. **वयं ध्यायेम-ध्येयतया मनसा धारयेम।** अर्थात्-ध्येय पदार्थ को हम लोग मन में धारण करते हैं।
6. **"ध्यायते अनया ध्यानं वा धीः"** जिससे ध्यान किया जाय उसको ध्यान व धी कहते है।

"धियः"

1. **"बुद्धयोवै धियः"** अर्थात्-बुद्धियां निश्चय रूप से "धियः" हैं। (मैत्र्युप० 6/7/भरद्वाज)
2. **"धियो धारणवत्योबुद्धयः"** अर्थात्-धारण करने वाली बुद्धियों को धियः कहते हैं। (विष्णु० भा०)
3. **"धर्मादिविषयाबुद्धिः"** धर्मादि विषयों वाली बुद्धि को धी कहते हैं।

(याज्ञ०, सायन०)

"यः"

1. **"यत्सत्य ज्ञानादिलक्षणम्"** अर्थात्-जो सत्य ज्ञानादि रूप ब्रह्म है।
2. **"प्रत्यग्रूपः"** अर्थात्-जो जीवात्म रूप है।
3. **"यः सविता देवः"** अर्थात्-जो सविता देव है।

"नः"

1. **"नः अस्माकम्"** अर्थात्-'नः' का अर्थ हमारा है।
2. **"नः अस्मदीयाः"** अर्थात् 'नः' का अर्थ हम लोगों का है।

"प्रचोदयात्"

1. चुद् धातु का अर्थ प्रेरणा करना है। प्रकर्षेण प्रेरयति। अच्छी तरह से प्रेरणा करने से "प्रचोदयात्" हुआ।
2. योजयति-धमार्थकाम मोक्षेष्वस्मदादीनां बुद्धिम्। अर्थात्-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में हम लोगों की बुद्धि को लगाता है, युक्त करता है।

3. प्रचोदयात्-प्रकर्षेण प्रेरयति सकलं कमानुष्ठानप्रवणा दुष्कर्मविमुखाश्चास्मद्बुद्धीः करोति। अन्तःकरण वृत्तीः प्रकाशयति वा। अर्थात्-अच्छी तरह से सम्पूर्ण कर्मानुष्ठान के सन्मुख, और दुष्कर्म से विमुख हमारी बुद्धि को करता है अथवा अन्तःकरण की वृत्तियों को प्रकाशित करता है।

"प्रचोदयात् प्रेरयेत्" प्रेरणा करे।

1. **देवस्य सवितुर्भर्गो वरणीयञ्च धीमहि।**
तदस्माकं धियो यस्तु ब्रह्मत्वे च प्रचोदयात्।।

बृहत्पाराशर के अनुसार सविता देव का जो भर्गरूप तेज वरणीय है उसका हम ध्यान करते हैं, वो हमारी बुद्धि को ब्रह्मरूप में प्रेरणा करें।

तीनों वर्णों के लिए तथा गायत्री मंत्र से जो लोग दीक्षित नहीं है उनके लिए अलग-अलग गायत्री मंत्र।

द्विजातियों-ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के लिए गायत्री मन्त्र

ब्राह्मण के लिए गायत्री मंत्र

1. **ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।।** शु.य.सं.अ. 36 मं.सं. 3

क्षत्रिय के लिए गायत्री मन्त्र

1. **ॐ आ देवो यातु सविता सुरत्लोऽन्तरिक्षप्रा वहमानोअश्वैः। हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयञ्च प्रसुवञ्च भूम।।** ऋ.वे. 6/45/1
2. **ॐ ताठ. सवितुर्वरेण्यस्य चित्रामाहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्। यामस्यकण्वो अदूहत्प्रपीनाठ. सहस्त्रधारां पयसा महीं गाम्।।** (शु.य.सं.अ. 17 मं.सं. 74)
3. **ॐ देवसवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाजं नः स्वदतु स्वाहा।।** (शु.य.सं.अ. 8 मं.सं.1)

वैश्य के लिए गायत्री मन्त्र

1. **ॐ युञ्जते मन उत युञ्जते व्धियो व्विप्रा विप्रस्य बृहतोब्बिपश्चितः। वि होत्रा दधे वयुनाविदेकऽइन्महीदेवस्य सवितुः परिष्टुतिः।।** (ऋग्वेद 5/81/1)
2. **ॐ युञ्जते मन ऽउत युञ्जते धियो ब्विप्रा विप्रस्य वृहतोव्विपश्चितः। व्वि होत्रा दधे वनाविदेकऽइन्महीदेवस्य सवितुः परिष्टुतिः।** (शु.य.सं.अ. 37 मं. सं.2)

3. ॐ विव्वश्वारूपाणि प्रतिमुञ्चते कविः प्रासावीद् भद्द्रंद्विपदे चतुष्पदे। विनाकमख्यत्सविता व्वरेण्योऽनु प्रयाणमुषसो व्विराजति।। (शु.य.सं.अ. 12 मं.सं. 3)

शताक्षरा-गायत्रीमन्त्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।। ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्यो-र्मुक्षीय माऽमृतात्।। ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि।।

ब्रह्म गायत्री

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।। (शु.य.सं.अ. 36 मं.सं. 3)

जो लोक दीक्षित नहीं हैं उनके लिए वेदोक्त गायत्री मन्त्र

ॐ ह्रीं यो देवः सविताऽस्माकं मनः प्राणेन्द्रियक्रियाः। प्रचोदयति तद्गर्भं वरेण्यं समुपास्महे।।

गायत्री मन्त्र

ॐ भूभुर्वः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।। (शु.य.सं.अ. 36 मं.सं. 3)

गायत्री मन्त्र का अर्थ

भावार्थः-भूलोक, अन्तरिक्षलोक, स्वर्गलोक अर्थात् सम्पूर्ण लोकों में व्याप्त वेदादि समस्त शास्त्र प्रसिद्ध दिव्य प्रकाश स्वरूप समस्त ब्रह्माण्ड के उत्पादक सूर्य को वरणीय सर्वश्रेष्ठ सभी दुःखों तथा पापों के निवारण में समर्थ तेज के स्वरूप का हम ध्यान करते हैं, वह दिव्य तेज हम सांसारिक मनुष्यों की बुद्धि-वृत्तियों को (भावनाओं को) शुभ कार्यों में अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में प्रवृत्त करे (प्रेरित करें)।

गायत्री मन्त्र के विविध अर्थ

1. पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्ग पर्यन्त जो सविता (प्रकाश स्वरूप सूर्य) सम्पूर्ण श्रुतियों में प्रसिद्ध है वह प्रकाशमान विश्व-स्त्रष्टा परमात्मा हमारी बुद्धि को सत्कार्य में प्रेरित करें।

2. जो सविता देव का तेज हम सबके द्वारा प्रार्थनीय है, जप करने वाले के पापों का जो नाश करता है, उस तेज की हम उपासना करते हैं, वह तेज हमारी बुद्धियों को उत्तम कार्य करने में प्रेरित करे।

4. सच्चिदानन्द, विराटस्वरूप, सब संसार को उत्पन्न करने वाले परमेश्वर के उस भजने योग्य तेज का हम लोग ध्यान करते हैं, जो हम लोगों की बुद्धियों को अपने स्वरूप में लगावें।

5. हम स्थावर-जङ्गम रूप सम्पूर्ण विश्व के उत्पन्न करने वाले उन अत्यन्त प्रकाशमय परमेश्वर के भजने योग्य तेज का ध्यान करते हैं, जो हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों की ओर प्रेरित करते हैं और जो भूर्लोक, भुवलोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक और सत्य नाम वाले समस्त लोकों में व्याप्त हैं, तथा जो सच्चिदानन्द स्वरूप जल रूप से संसार का पालन करने वाले, अनन्त तेज के धाम, रसमय, अमृतमय और भूर्भुवः स्वः स्वरूप (त्रिभुवनात्मक) ब्रह्म है।

प्रायः सभी ने मनु, आश्वलायन, कूर्मपुराण, शौनक, व्यास, वसिष्ठ, विश्वामित्र योग याज्ञवल्क्य, वृहद्योग याज्ञवल्क्यादियों का भी जप के लिए यह लिखित मत ही परिपुष्ट होता है।

वानप्रस्थादियों के लिए गायत्री जप प्रकार

ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
गायत्री प्रणवश्चान्ते जपोह्येवमुदा हृतः॥

अर्थात्-सर्वप्रथम ओंकार का उच्चारण करके उसके बाद "भूभुर्वः स्वः" उसके बाद त्रिपदा गायत्री और अन्त में ओंकार सहित गायत्री का जप कहा गया है।

गायत्री प्रकृति है ओंकार को पुरुष कहा गया है। इन दोनों के संयोग से सम्पूर्ण संसार प्रवर्तित होता है।

संक्षिप्त रूप से गायत्री जप के नियम

1. प्रातः शौच, दन्तधावन और स्नानादि क्रियाएं करके ही उपासना के लिए प्रयासरत हों।

2. सूतक हो जाने पर, शुद्धता होने तक केवल मानसिक जप करें।

3. पुरश्चरण में ब्रह्मचर्य तथा सात्विक होना अनिवार्य है।

4. केवल ब्राह्मण ही द्विज नहीं कहलाते अपितु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, गुरु दीक्षा लेने के बाद द्विज कहलाते हैं। यह सभी द्विज-नौ तन्तु वाला, ओंकार, अग्नि, नाग, सोम, पितृगण, प्रजापति, मारुत, सूर्य यह आठ देवता क्रम से यज्ञोपवीत की आठ तन्तुओं में निवास करते हैं और नवम तन्तु परिपूर्ण, अव्यय, विकार रहित सबसे बड़ी संख्या की प्रतीक है इस नवम तन्तु में सभी देवता निवास करते हैं, सभी देवताओं का सान्निध्य (साथ) हमारे शरीर के साथ बना रहे, तथा हम गायत्री उपासना के योग्य बन सकें। इसलिए द्विजत्व प्राप्त व्यक्तियों को यज्ञोपवीत अवश्य धारण करना चाहिए।
5. जप के समय माला को गोमुखी से ढककर या वस्त्र से ढककर जप करना चाहिए।
6. स्मरण रहे कि जप के समय तर्जनी (अंगूठे के पास वाली तथा कनिष्ठिका छोटी अंगुली का माला के साथ स्पर्श न हो।)
7. जप के समय मन की एकाग्रता का ध्यान रखें।
8. जप करते समय यहां पर माला समाप्त हो रही है, वहीं से फिर जप प्रारम्भ करना चाहिए।
9. माला में जो समेरू बड़ा मनका है उसका उलंघन नहीं होना चाहिए।
10. माला न होने पर दाहिने हाथ की अनामिका के बीच वाले पोर से जप करना प्रारम्भ करें साथ में दिए हुए चित्र के अनुसार एक से 10 तक जप करें। 10 बार जप करने से 100 संख्या होगी उसके बाद पुनः 1 से 8 तक जप करें, एक माला पूरी हो जाएगी जैसे जप करते समय अंगूठे से 10 से 10 तक गिनती कर लें।
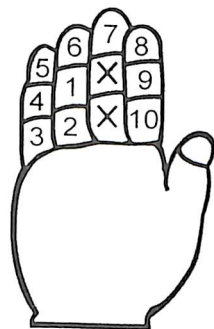
स्त्री को वेद पढ़ने का तथा गायत्री मन्त्र जप का अधिकार है

स्त्री को वेद पढ़ने के लिए वेदों में कोई निषेध वाक्य नहीं मिलते प्रत्युत-ऋग्वेद 10/158/1-3, यजुर्वेद 3/57 अथर्ववेद 14/1/42, काठक संहिता 5/4/23-24 इत्यादि प्रकार से वेद ऋचाओं से विविध स्मृति वाक्यों से स्त्रियों के वेद पढने की-यज्ञादि धार्मिक अनुष्ठानादि करने में कहीं पर भी विरोध नहीं मिलता, यदि कहीं कोई वाक्य मिलते हैं तो वे प्रक्षिप्तांश समझने चाहिए।

अपवित्र अवस्था तथा मासिक धर्मादि समय को छोड़कर स्त्री धार्मिक

अनुष्ठान यज्ञ यागादि जप तथा पूजा पाठादि नियमानुसार कर सकती है।

24 लाख गायत्री पुरश्चरण में अंगन्यास तथा अन्य विधियों का पालन करना आवश्यक है वे विधियां गायत्री पद्धति रहस्यादियों में देखी सकती हैं।

ऋग्वेद में-घोषा, गोधा, विश्ववारा, ब्रह्मजाया, इन्द्राणी, इन्द्र की माता, सरमा, उर्वशी लोपामुद्रा आदि सभी ब्रह्मवादिनी कही गई हैं-ऋग्वेद के सूक्तों में इत्यादि ऋषियों को मन्त्रद्रष्टा कहा है।

त्रयोवेदा अन्व सृज्यन्त। अथ ह सीता सावित्री।
सोम ऽ राजानं चकमे। तस्या उ ह त्रीन् वेदान् प्रददौ।।

तै.ब्राह्मण 2/3/10/1-3

अर्थात्-किस प्रकार सोम ने सीता सावित्री को तीन वेद दिए। मनु की पुत्री 'इड़ा' का वर्णन करते हुए तैत्तरीय ब्रा. 1/1/4/4 में इड़ा को यज्ञानुकाशिनी बतलाया है। सायणाचार्य ने इसका अर्थ-यज्ञ तत्व प्रकाशन समर्था किया है।

यत्रः नार्यः सुपूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः। यज्ञ में भी पत्नी साथ बैठती है, सभी धार्मिक कृत्यों में पति के साथ बैठती है, पत्नी अर्धांगिनी है। अतः यदि उसको यज्ञ यगादियों में, हेय समझ लिया तो अर्धांगिनी का अर्थ-अपमानित होगा।

कुछ समय विशेष को छोड़कर-स्त्रिएं वेद पढ़ने की अधिकारिणी हो सकती है-सर्वदा नहीं।

प्रत्येक द्विज को गायत्री मन्त्र जानना उसी प्रकार अनिवार्य है, जैसे यज्ञोपवीत धारण करना।

गायत्री की मूर्तिमान् प्रतिमा जैसे यज्ञोपवीत को धारण करना आवश्यक है। वैसे ही द्विजों को गायत्री मन्त्र का जप करना अत्यन्त आवश्यक है। गायत्री मन्त्र का जप गुरु से दीक्षा लिए बिना नहीं करना चाहिए।

दीक्षा प्रकार

1. दीक्षा से शिष्यों को देवता, अग्नि तथा गुरु की पूजा का अधिकार प्राप्त हो जाता है।
2. जो दिव्य ज्ञान दे और पापों का नाश करे, उसी को वेदज्ञ विद्वानों ने "दीक्षा" कहा है। अर्थात् जिससे ज्ञान प्राप्त हो, जो पापों का नाश करे उसको दीक्षा कहते हैं।
3. जब तक विद्वान् गुरु, उपासना, उपास्य और उपासक के विषय में विशेष

जानकारी न दें, जप विधि के प्रकारों को न बताएं तब तक बिना दीक्षा के मन्त्र प्रस्फुरित नहीं होता।

4. दीक्षा के लिए-गुरु और शिष्य अत्यन्त शुद्ध भाव वाले होने चाहिए।

गायत्री मन्त्र द्रष्टा महर्षि विश्वामित्र

महर्षि विश्वामित्र अपने पुरुषार्थ, सच्ची लगन, उद्यम और तप की गरिमा के रूप में शायद ही कोई महर्षि विश्वामित्र समान हो। इन्होंने अपनी तपस्या के बल से क्षत्रियत्व से ब्रह्मत्व प्राप्त किया, राजर्षि से ब्रह्मर्षि बने, देवताओं और ऋषियों के पूज्य बन गए। सप्तर्षियों में उन्हें विशिष्ट स्थान प्राप्त हुआ।

तपस्या से इनको विविध मन्त्रों का दर्शन हुआ इसीलिए इनको मन्त्र द्रष्टा ऋषि भी कहते हैं। ऋग्वेद का 62 सूक्तों वाला तृतीय मण्डल-वैश्वामित्रमण्डल कहलाता है।

ब्रह्म गायत्री का जो मूल मन्त्र है वह ऋग्वेद के तृतीय मण्डल का मन्त्र है। इस ऋग्वेदोक्त ब्रह्म गायत्री मन्त्र के मुख्यद्रष्टा तथा उपदेष्टा महर्षि विश्वामित्र ही हैं। ऋग्वेद के तृतीय मण्डल के बासठवें सूक्त का दसवां मन्त्र गायत्री मंत्र के नाम से विख्यात है जैसे-

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

यह मन्त्र महर्षि विश्वामित्र की उपासना से उनकी असाधारण साधना से प्राप्त हुआ है।

यह मन्त्र वेद मन्त्रों का मूल है, बीज रूप है इसी से सभी मन्त्रों का प्रादुर्भाव हुआ। इसीलिए गायत्री को वेदमाता कहा है।

सनातन परम्परा से इसकी महिमा स्वयं सिद्ध है। उपनयन संस्कार में गुरु के द्वारा इसी मंत्र के उपदेश से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को द्विजत्व प्राप्त होता है। त्रिकाल सन्ध्या में प्राणायाम, सूर्योस्थानादि द्वारा गायत्री मंत्र के जप की सिद्धि में सहायता प्राप्त होती है। गायत्री-मन्त्र महर्षि विश्वामित्र की ही देन है। वे इसके आदि आचार्य हैं।

गायत्री उपासना में इनकी कृपा प्राप्त करना आवश्यक है। गायत्री साधना तथा चिरकाल तक सन्ध्योपासना की शक्ति से-काम क्रोधादि विकारों पर विजय प्राप्त की और ये तपस्या के आदर्श बन जए।

वैदिक मन्त्रों के मध्यम से ही महर्षि ने गायत्री उपासना पर बल दिया। उनके द्वारा जिन ग्रन्थों का प्रणयन किया, उनमें भी प्रमुख रूप से गायत्री साधना का ही उपदेश प्राप्त होता है।

विश्वामित्र कल्प, विश्वामित्र संहिता, विश्वामित्र स्मृति, यह महर्षि के प्रमुख ग्रन्थ हैं।

महर्षि विश्वामित्र तपस्या के धनी थे, गायत्री माता की पूर्ण कृपा इन्हें प्राप्त थी। इन्होंने नवीन सृष्टि तथा त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग आदि भेजने और ब्रह्मर्षि पद प्राप्त करने-सम्बन्धी जो असम्भव कार्य किए, उन सब के पीछे गायत्री जप और सन्ध्योपासना का ही प्रभाव था।

महर्षि विश्वामित्र कुशिक वंश में महाराज गाधि के पुत्र थे। जिस प्रकार श्रद्धा से, सतत प्रयास से, तपस्या से असाधारण उपासना से महर्षि विश्वामित्र ने अचिन्तनीय, अनिर्वचनी उस गायत्री तत्व को जन-साधारण के लिए मन्त्रद्रष्टा के रूप में देखा। इससे यह शिक्षा लेकर गायत्री मन्त्र की उपासना की और आगे बढे, जिससे आप अपने आपको अपने परिवार के सदस्यों को, सामाजिक जनों को, गायत्री उपासना की ओर आगे ले जाते हुए मन्त्रद्रष्टा विश्वामित्र के अनुकरण करने वाले बने। और आपके सभी अभीष्ट "मनोकामनाएं" सिद्ध हों।

गायत्री पूजा

1. सर्वप्रथम आत्मपूजन कर लें।
2. पृथ्वी सूर्य धूप दीप पूजन कर लें।
3. अपना नाम गोत्र तिथि वारादियों का उच्चारण करके गायत्री पूजा की प्रतिज्ञा कर लें। सर्वविध विघ्नों को दूर करने के लिए-गणेश पूजन की प्रतिज्ञा करें।
4. श्री गणेश अम्बिका का पूजन करें।
5. गणेश पूजन में—आवाहन, प्रतिष्ठापन, आसन, पाद्य, अर्घ्य आचमन, स्नान, दूध, घी, शहद, शक्कर स्नान, शुद्ध स्नान। वस्त्रार्पण, उपवस्त्रार्पण, यज्ञोपवीत, तिलक, चावल, पुष्प, दूर्वा, सिन्दूर-सुगन्धित द्रव्य, धूप, घृतज्योति, हस्तप्रक्ष्यालन, नैवेद्य, आचमन, ऋतुफल, ताम्बूल (पान) दक्षिणा, आरति, पुष्पाञ्जलि, प्रदक्षिणा तीन, विशेषार्घ्य, प्रार्थना, समर्पण यथाक्रम पूजन समाप्ति के बाद हाथ पर जल लेकर कहें कि इस पूजन से गणेश तथा अम्बिका प्रसन्न हों। उसके बाद-

वरुण कलश की पूजा करके, अपने कुलदेवादियों को नमस्कार करने के अनन्तर- अपने पूर्वजों को प्रणाम करें। उसके बाद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद को प्रणाम करके, वास्तु देवताओं को, नवग्रहों को योगिनी तथा क्षेत्रपाल, सर्वतो-भद्रमण्डल देवताओं को प्रणाम करके।

भगवती गायत्री माता की पूजा निम्नलिखित प्रकार से करें। सर्वप्रथम ध्यान, आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन मधुपर्क, स्नान, पंचामृत-दूध-दही-घी-शहद-शर्करास्नान, शुद्ध जल, गन्धोदक स्नान, उद्वर्तन (वुटना) स्नान, शुद्धोदक स्नान इसके बाद सिंहासन या कलश पर मूर्ति स्थापित करके, वस्त्र तथा उपवस्त्र समर्पित करें, उसके बाद यज्ञोपवीत, पादुका समर्पण, कुंकुम समर्पण, अक्षत, तिलक, सिन्दूर, कज्जल, आभूषण, पुष्पमाला, पुष्प, सुगन्धित द्रव्य (परफ्यूम/सेन्ट) उसके बाद दश-आवरण पूजा, धूप, धृतदीपक, नैवेद्य ताम्बूल, पूगीफल, दक्षिणा, आरती, मन्त्रपुष्पाञ्जलि यथा शक्ति निम्नलिखित गायत्री मन्त्र का जप करें-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो
यो नः प्रचोदयात्॥

उसके बाद प्रदक्षिणा-

प्रार्थना

नमस्ते देवि गायत्रि सावित्रि त्रिपदेऽक्षरे।
अजरे अमरे मातस्त्राहि मां भव सागरात्॥

नमस्ते सूर्यसंकाशे सूर्यसावित्रिकेऽमले।
ब्रह्मविद्ये महाविद्ये वेदमातर्नमोऽस्तुते॥

अनन्तकोटिब्रह्माण्डव्यापिनि ब्रह्मचारिणि।
नित्यानन्दे महामाये परेशानिनमोऽस्तुते॥

त्वं ब्रह्मा त्वं हरिः साक्षाद्रुद्रस्त्वमिन्द्र देवता।
मित्रस्त्वं वरुणस्त्वंच त्वमग्निरश्विनौभगः॥

पूषाऽर्यमा मरुत्वांश्च ऋषयोऽपि मुनीश्वराः।
पितरो नागा यक्षाश्च गन्धर्वाप्सरसां गणाः॥

पुष्पाञ्जलि-

जानामि पूजनमहं न हि शास्त्र सिद्धं
शक्ति स्तु ते परिचिता मम सर्वतश्च।
पुष्पाञ्जलिर्जननि यश्चरणाब्जयोस्ते
संदीयते परिगृहाण विसृज्य दोषान्॥

ॐ भूर्भुवः स्वः भगवत्यै गायत्री देव्यै नमः, मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।
-इस मन्त्र से पुष्पाञ्जलि समर्पित करें।

गायत्री के पांचमुख

गायत्री उपासना व्यवस्थित जीवन के लिए धार्मिक जीवन का एक अविच्छिन्न अंग है। उसे भली प्रकार समझना उसके धर्म, रहस्य और तथ्य उपकरणों को जानना आवश्यक है, वेदमूर्ति तपोनिष्ठ श्री रामशर्मा आचार्य जी के अनुसार-जैसे- डाक्टर, इन्जीनियर, यन्त्रविद्, बढ़ई, लुहार, ललारी, हलवाई, सुनार, दर्जी, कुम्हार, जुलाहा, नट, कथावाचक, अध्यापक, गायक, किसान आदि सभी वर्गों के कार्यकर्ता, अपने-अपने कार्य की बारीकियों को जानते हैं और प्रयोग विधि, हानि-लाभ के कारणों को समझते हैं।

गायत्री विद्या के जिज्ञासुओं और प्रयोक्ताओं को भी अपने विषय में भली भांति परिचित होना चाहिए, अन्यथा सफलता के क्षेत्र में अवरोध पैदा होगा।

ऋषियों ने गायत्री के पांच मुख बताकर हमें बताया है कि इस महाशक्ति के अन्तर्गत पांच तथ्य ऐसे हैं जिनको जानकर संसार सागर से साधक पार हो सकता है।

गायत्री के पांच मुख वास्तव में उसके पांच भाग हैं- 1. ॐ, 2. भूः भुवः स्वः, 3. तत्सवितुर्वरेण्यं, 4 भर्गोदेवस्य धीमहि, 5. धियो यो नः प्रचोदयात्।

पंचदेवोपासना, गणेश, दुर्गा, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ॐ अर्थात् गणेश प्रथमः व्याहृति- अर्थात् दुर्गा (शक्ति), गायत्री का द्वितीय चरण, ब्रह्मा, तृतीय चरण विष्णु, चतुर्थ चरण महेश पञ्चम। इस प्रकार यह पांच देवता गायत्री के प्रमुख शक्ति पुञ्ज कहे जा सकत हैं।

चार वेद और पांचवां यज्ञ यह पांचों ही गायत्री के पांच मुख हैं, जिनमें सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान और धर्म-कर्म बीज रूप में केन्द्रीभूत हो रहे हैं।

शरीर पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, इन पांच तत्वों से बना हुआ है। गायत्री के पांच मुख बताते हैं कि यह शरीर और कुछ नहीं केवल पंचभूतों का जड परमाणुओं का सम्मिश्रण मात्र है। पांच मुखों का एक सन्देश यह है कि पंच तत्वों से बने पदार्थों को केवल उपयोग की वस्तु समझें, उनमें लिप्त, तन्मय, आसक्त एवं मोह ग्रस्त न हों।

पांच मुखों का दूसरा संकेत आत्मा के कोशों की ओर है, जैसे शरीर के ऊपर बनियान, कुर्ता, वासकट, कोट और ओवर कोट एक के ऊपर एक पहन लेते हैं, वैसे ही आत्मा के ऊपर यह पांच आवरण चढे हुए हैं। इन पांचों को 1. अन्नमय कोश, 2. प्राणमय कोश, 3. मनोमय कोश, 5. अनन्दमय कोश कहा जाता है। इन पांच पर

कोटों के किले में जीव बन्दी बना हुआ है। जब उसके फाटक खुल जाते हैं, तो आत्मा बन्धन मुक्त हो जाती है।

पांच तत्व, पांच कोश, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, पांच प्राण, पांच, तन्मात्राएं, पांच यज्ञ, पांच देव, पांच योग, पांच अग्नि, पांच अंग, पांच वर्ण, पांच स्थिति, पांच अवस्था, पांच शूल, पांच क्लेश आदि अनेक पंचक गायत्री के पांच मुखों से सम्बन्धित है। इनको सिद्ध करने वाले, पुरुषार्थी व्यक्ति ऋषि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, महर्षि, देवर्षि कहलाते हैं।

तीन नामों से गायत्री का स्मरण

तीन प्रकार से गायत्री का स्मरण किया जाता है-

1. प्रारम्भिक अवस्था में गायत्री (प्रातः)
2. मध्य अवस्था में सावित्री (मध्याह्न)
3. अन्तिम अवस्था में सरस्वती (सायम्)

एक ही शक्ति के प्रारम्भ, तरुणाई और परिपक्वता के भेद से तीन नाम निर्धारित किए गए हैं।

गायत्री की आभा अरुण है, सावित्री की श्वेत और सरस्वती की आभा कृष्णवर्ण सी धुंधली है। जैसे सूर्य श्वेत वर्ण है परन्तु प्रातः काल में उसकी आभा लाल, मध्याह्न की शुभ्र और सन्ध्या काल में धुंधली हो जाती है। इसी प्रकार साधना काल में साधक को अपनी स्थिति के अनुसार यह तीनों वर्ण ध्यानावस्था में दिखाई देते हैं।

(1) प्रातः काल का समय ब्रह्म मुहूर्त का कहलाता है। अतः प्रातः काल की सन्ध्या को ब्राह्मी कहते हैं। हंस प्राण को कहते हैं हंसारूढ अर्थात् प्राण पर छाई हुई। ब्राह्मी गायत्री प्राण पर अपना विशेष प्रभाव प्रकट करती है।

कुमारी का अर्थ है-बाल्यवृत्तियों से चंचलता से युक्त, रक्त गतिशीलता का विकास विद्युत का प्रतीक है। प्रातः कालीन गायत्री में गतिशीलता का विकास विद्युत के सञ्चार का गुण है, यही उसका रक्तांगी और रक्तवस्त्रावृता होना है।

त्रिनयनी-तीन दृष्टियों वाली, तीनों लोकों को दृष्टि में रखने वाली, शरीर, मस्तिष्क और अन्तःकरण को देखने वाली है। तीनो ओर दृष्टि रखती है। इसलिए इस त्रिनयनी कहते हैं।

पाश-अर्थात् बन्धन, अंकुश-अर्थात् नियन्त्रण, अक्षमाला-शब्द मातृकाएँ, कमण्डलु-अर्थात् धारणा, ऋग्वेद-अर्थात् ज्ञान, ब्रह्मदैवत्या-अर्थात् ब्रह्म की देवशक्ति। इन सब लक्षणों, गुणों और संसाधनों से सम्पन्न होने के कारण प्रातः काल की गायत्री अपने साधक पर इन सब उपचारों का प्रयोग करती है। वह इन सब साधनों से ब्राह्मी गायत्री द्वारा तपाया जाता है और ब्रह्मभूत बनाया जाता है। ब्रह्म गायत्री भूर्लोक निवासिनी है। उसका इस भूर्लोक के प्राणियों द्वारा विशेष उपयोग होता है।

भूः लोक शरीर को भी कहते हैं, ब्राह्मी शरीर को स्वस्थ रखती है। वह सूर्य गामिनी है। जिस प्रकार सूर्य की तेजस्वी किरणें मनुष्य को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं, वैसे ही गायत्री शक्तियाँ भी काम करती हैं।

(2) मध्याह्न गायत्री सावित्री नाम से कही जाती है। यह सावित्री नाम वाली युवती, शुभ्रांङ्गी (गौरवर्ण) शुभ्रवस्त्र, त्रिनयना, पाश, अंकुश, त्रिशूल, डमरू लिए हुए है, वृष पर आरूढ है। यजुर्वेद सहित, रुद्रदैवत्या, भुवः लोक अवस्थित सूर्य मार्ग गामिनी, परिपुष्ट तेज से युक्त उस प्रकाश स्वरूपिनी गायत्री को श्वेतवर्ण तथा श्वेतवस्त्रावृता कहा गया है-सविता नाम सूर्य का है सूर्य के समान तेजस्वी होने से उनका नाम सावित्री है। त्रिशूल अर्थात् तीन दुःखों, अज्ञान, अभाव और अशक्ति इन तीनों को वह अपने हाथ की मुट्ठी में नियन्त्रित करके रखे हुए हैं।

डमरू ध्वनि तथा वाणी का प्रतीक है। वृषभ धर्म का प्रतीक है, वह तरुण सावित्री, धर्म पर आरूढ है। यजुर्वेद कर्मकाण्ड का प्रतीक है वह कर्म की प्रेरणा करता है। रुद्रदैवत्या, अर्थात् भयंकर, उग्र दिव्य शक्तियों वाली, भुवः लोक में निवास करने वाली, भुवः मानस लोक का नाम है। मस्तिष्क, विचार, तर्क, बुद्धि, सूझबूझ को परिमार्जित करने वाली है।

(3) सन्ध्याकालीन गायत्री, वह सावित्री के नाम वाली वृद्धा, कृष्णांगी, कृष्णवसना, त्रिनेत्रा, शंख, चक्र, गदा, पद्म हाथ में लिए हुए, गरूड पर आरूढ-सामवेद सहित विष्णु दैवत्या, स्वः-लोक निवासिनी-सूर्य पथ गामिनी, त्रिनयनी स+रस+वतीऽ सरस्वती। सरसता वाली, संगीत, कला, कवित्व तथा अन्य स्थूल सूक्ष्मरसों को निर्झरिणी होने के कारण परिपक्व सन्ध्या कालीन गायत्री को सरस्वती कहा है।

वृद्धा का अर्थ है-परिपक्व, पूर्व विकसित, विकास की अंतिम मर्यादा तक पहुंची हुई है।

कृष्णवर्ण-धुंधलापन मिश्रण का द्योतक है। ब्रह्म और प्रकृति के उभय रूपों का मिश्रण काला होता है। पाराश्वेत है, गन्धक पीली है, इसी प्रकार ब्रह्म शुभ्र है,

प्रकृति पीत है, दोनों के मिश्रण से काला रंग बनता है, भगवान् राम और कृष्ण के काला रंग होने का यही कारण था।

सन्ध्याकालीन गायत्री में ब्रह्म और प्रकृति का संम्मिश्रण होने से वह कृष्ण वर्ण वाली कृष्ण वस्त्र वाली कहलाती है। सरस्वती के हाथ में चार पदार्थ हैं। शंख अर्थात्-वाणी, चक्र-अर्थात् तेज, गदा-अर्थात् विनाश, पद्म-अर्थात् वैभव, इन चारों शक्तियों पर सरस्वती का आधिपत्य है। माला, वीणा, पुस्तक धारिणी हंसवाहिणी-नीर क्षीर विवेकिनी तथा ध्यानगम्य होने पर कार्य साधनी है।

गरूड का अर्थ है क्रिया तथा गतिशीलता सरस्वती का क्षेत्र विचार तक ही सीमित नहीं है अपितु वह क्रियाशील भी है। सामवेद, संगीत का-बाह्य गायन का प्रतीक है। विष्णु की सेविका, दिव्य शक्तियों का प्रतिनिधित्व करने के कारण वह विष्णु दैवत्या कहलाती है।

स्वः-लोक कहते है हृदय को-अन्तःकरण को। सरस्वती वीणा के तारों को झंकृत करती है-अन्तःकरण में विवेक जागृत करती है।

इस प्रकार ब्राह्मी सावित्री और सरस्वती का संक्षिप्त सारांश प्रतिपादित किया गया है। अविकसित, विकसित और परिपुष्ट इन तीन भेदों से तीन रूप कहे गए हैं। इन तीनों को क्रम से प्रातः, मध्याह्न, सन्ध्या इन तीन काल विशेषों में विभक्त करने के कारण-(तीन बार) सन्ध्या करने के कारण (त्रिकाल सन्ध्या) के नाम से व्यवहृत किया जाता है।

साधक अपने लिए जिस शक्ति की उपयोगिता समझें उसे अपनी साधना के लिए चुन लेना चाहिये।

गायत्री का गोत्र-सांख्यायन है। आत्मकल्याण के दो मार्ग हैं-एक योग, दूसरा सांख्य गीता में इन दोनो को एक बतलाया है जैसे-

"सांख्ययोगौ पृथग्वालाः प्रदवन्ति न पण्डिताः"

अनासक्ति को योग कहते हैं, संसार के पदार्थों को त्यागकर-उनसे विमुख होकर आत्मा को प्राप्त करना योग मार्ग कहलाता है।

दूसरा मार्ग है संसार के पदार्थों को उत्साह पूर्वक एकत्रित करना और उदारता पूर्वक उनका सन्मार्ग में व्यय करना। यह दूसरा मार्ग ही सांख्य मार्ग है। गायत्री को सांख्यायन अर्थात् सांख्य का घर कहा है। वह सांख्य प्रधानता के साथ जीवन व्यतीत करने का संकेत करती है यही गायत्री का गोत्र है।

गायत्री के चौबीस अक्षर हैं।

गायत्री के तीन पाद है (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद) यह तीनों वेद गायत्री की आधार शीला हैं। चतुर्थपाद-परो रजसे सावदोम् है।

छः कुक्षि हैं-छः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ऊर्ध्व, अधः-इन छहों दिशाओं में गायत्री व्याप्त हैं।

पांच शीर्ष (सिर हैं) वेद के छः अङ्गों को शीर्ष कहा गया है। गायत्री का शिर छन्द हैं, शेष व्याकरण, शिक्षा, कल्प, निरुक्त, ज्योतिष यह पांच वेदाङ्ग सिर अर्थात् मस्तिष्क हैं।

विष्णु धर्मोत्तर के अनुसार गायत्री मन्त्र वर्णार्थ

कर्मेन्द्रियाणि पञ्चैव पञ्चबुद्धीन्द्रियाणि च।
पञ्च बुद्धीन्द्रियार्थाश्च भूतानां चैव पञ्चकम्॥

मनोबुद्धिस्तथैवात्मा अव्यक्तश्च यदुत्तमम्।
चतुर्विंशति एतानि ग्रायत्र्या अक्षराणि च॥
प्रणवं पुरुषं विद्धि सर्वगं पंचविंशकम्॥

अर्थात्-पांच कर्मेन्द्रिय, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच ज्ञान इन्द्रियों के विषय, आकाशादि पांच महाभूत, मन, बुद्धि, जीवात्मा और जो इन कर्मों से श्रेष्ठ कारण रूप अव्यक्त है। यह चौबीस गायत्री के अक्षर (रूप) हैं। सर्व चराचर में जो व्यापक है वह प्रणव रूप पुरुष है-उसको पच्चीसवां समझो।

गायत्री जप का महत्व

गायत्र्या न परं जप्यं गायत्र्या न परं तपः।
गायत्र्या न परं ध्यानं गायत्र्या न परं हुतम्॥

अर्थात्-गायत्री से परे कोई जप नहीं है, गायत्री से श्रेष्ठ कोई तप नहीं है, गायत्री से परे कोई ध्यान नहीं है, गायत्री से परे कोई हवन नहीं है।

यद्यपि गायत्री उपासना में-गायत्री कल्प, गायत्री पटल, कवच, पञ्जरस्तोत्र, सहस्रनाम स्तोत्र, गायत्र्युपनिषद्, गायत्री तत्व, गायत्री हृदय, गायत्री स्तवराज आदियों का भी अपना-अपना महत्व है। परन्तु **"यज्ञानां जप यज्ञोऽस्मि"** इस श्रीमद्भगवद्गीता के दशम अध्याय पच्चीसवें श्लोक के अनुसार सभी पूजा पाठों और यज्ञों से जप यज्ञ का विशेष महत्व है (मन्त्रों के अक्षरों की बार-बार आवृत्ति करने को जप कहते हैं। वह जप, मानसिक, उपांशु तथा वाचिक भेद से तीन प्रकार का होता है।

1. मानसिक जप-

जिस मन्त्र के अक्षरों की पंक्ति को वर्ण, स्वर, पद युक्त अर्थ का उद्देश्य करके मन से उच्चारण किया जाता है। वह जप मानसिक कहलाता है।

2. उपांशु जप-

जिह्वा और ओष्ठ कुछ हिला करके-देवता में मन लगाकर-कुछ कुछ सुनने योग्य जो जप किया जाता है, उसको उपांशु जप कहा जाता है।

3. वाचिक जप

वाणी से मन्त्र का उच्चारण करने को वाचिक जप कहते हैं।

इन तीनों जपों में मानविसक जप का महत्व सर्वोपरि है।

4. जल में गायत्री मन्त्र का जप न करें-

कदाचिदपि नो विद्वान् गायत्रीमुदके जपेत्।
गायत्र्यग्निमुखी प्रोक्ता तस्मादुत्थाय तां जपेत्॥

इस गोभिलस्मृति के वाक्यानुसार विद्वान् कभी भी जल में गायत्री न जपे क्योंकि गायत्री अग्निमुखी कही गई है अत: जल के बाहर गायत्री का जप करना श्रेष्ठ है।

अग्नि और ब्राह्मण, विराट् स्वरूप भगवान् के मुख से उत्पन्न हुए इसीलिए ब्राह्मण को अग्नि स्वरूप कहा गया और गायत्री उपासना, सन्ध्या के बिना ब्राह्मण को अब्राह्मण कहा गया। यद्यपि द्विजातियों-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों के लिए गायत्री उपासना आवश्यक है। ब्राह्मणत्व की रक्षा के लिए ब्राह्मण सन्ध्या-तथा तेजोमयी गायत्री की उपासना अत्यावश्यक रूप से करे।

जप विधि

स्नानं कृत्वा शुचौ देशे बद्ध्वा रुचिरमासनम्।

इस वाक्यानुसार स्नान कर, स्वच्छ वस्त्र पहनकर, स्वच्छ स्थान पर, सुखासन/कम्बलासन अथवा कुशासन पर पद्मासन या साधारण आसन में बैठकर-शिव पार्वती तथा गुरु का स्मरण करके एकाग्रचित्त होकर प्राण अपान वायु को संयत कर जप प्रारम्भ करें।

निम्नलिखित प्रकार से जप का निषेध कहा है-

ऊष्णीषी कंचुकी नग्नो मुक्तकेशो मलावृतः।
अपवित्रतकरोऽशुद्धो विलपन्न जपेत्क्वचित्॥

अर्थात्-पगडी बांधकर, अंगरखा (कंचुकी) पहनकर, नग्न अवस्था में केश खुले हुए, मफलर (गुलूबन्द) धारण किए हुए, अपवित्र हाथ से, अशुद्ध अवस्था में, और बोलते हुए कभी भी जप न करें।

ध्यायेत्तु मनसा मन्त्रं जिह्वोष्ठौ न विचालयेत्।
न कम्पयेच्छिरो ग्रीवां दन्तान नैव प्रकाशयेत्॥

अर्थात्-मन से मन्त्र का स्मरण करना चाहिए। जिह्वा और ओष्ठ हिलने नहीं देना चाहिए या हिलाना नहीं चाहिए, सिर तथा ग्रीवा कन्धों को नहीं हिलाना चाहिए। जप करते समय दांत दिखने नहीं चाहिए।

जप के लिए प्रशस्त मालाएं

1. वृहत्पाराशर संहिता में संख्या के बिना किए जाने वाले जप को आसुरी जप कहा है-अतः माला से गिनती पूर्वक जप करना आवश्यक है।
2. पातञ्जल योग सूत्र में कहा है कि तज्जपस्तदर्थ भावनम्, अर्थात् जिस मंत्र का जप करें उसी के अर्थ की भावना करें।
3. प्रातः प्राणायाम के पश्चात् एक हजार अशक्त होने पर एक माला जप अवश्य करें।

निम्नलिखित मालाएं उत्तरोत्तर जप के लिए प्रशस्त मानी गई हैं-

1. अंगुलियों में जप करने से 1 गुणा फल प्राप्त होता है।
2. अंगुलियों के पोरों में 8 गुणा फल मिलता है।
3. शंख मणियों की माला में 100 गुणा, मूंगे की माला में हजार गुणा, स्फटिक की माला में दस हजार गुणा, मुक्ता की (मोती) माला में लाख गुणा, कमल गट्टे की माला में दस लाख गुणा, सुवर्ण की माला में करोड़ों गुणा, कुश ग्रन्थि और रुद्राक्ष की माला में जप करने से अनन्त फल होता है।

सबसे बढकर-रक्षास्त्र, ब्रह्मास्त्र, पाशुपतास्त्र गायत्री के अनुलोम-विलोम विधि से तैयार किए जाते हैं। स्थूल, सूक्ष्म सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का सफाया करके मानव, दानव सबको पराजित कर देते हैं। सन्ध्याबन्दन के समय गायत्री मन्त्र

के उच्चारण के साथ दिया गया अर्घ्य ऐसे ही ब्रह्मास्त्र रूपधारण कर सूर्य के सभी शत्रु राक्षसों का संहार करके सूर्य भगवान् को उदित होने के लिए निष्कष्टक मार्ग बना देता है।

असुराणां वधार्थाय अर्घ्यकाले द्विजन्मनाम्।
प्रोक्तं ब्रह्मास्त्र मेतद्धि सन्ध्या वन्दन कर्मसु॥

निम्नलिखित प्रकार से गायत्री मंत्र से मनोऽभिलषित सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं।

गायत्री-हृदयम्

ॐ अस्य श्रीगायत्रीहृदयस्य नारायण-ऋषिः, गायत्रीच्छन्दः, परमेश्वरी गायत्री देवता, गायत्रीहृदयजपे विनियोगः।

द्यौर्मूर्ध्नि दैवतम्। दन्तपङ्क्तावश्विनौ। उभे सन्ध्ये चोष्ठौ। मुखमग्निः। जिह्वा सरस्वती। ग्रीवायां तु बृहस्पतिः। स्तनयोर्वसवोऽष्टौ। बाह्वोर्मरुतः। हृदये पर्जन्यः। आकाशमुदरम्। नाभावन्तरिक्षम्। कट्योरिन्द्राग्नी। जघने विज्ञानघनः प्रजापतिः। कैलासमलये उरः। विश्वेदेवा जान्वोः। जङ्घायां कौशिकः। गुह्यमयने। ऊरू पितरः। पादौ पृथ्वी। वनस्पतयोऽङ्गुलिषु। ऋषयो रोमाणि। नखानि मुहूर्त्तानि। अस्थिषु ग्रहाः। असृङ् मांसम् ऋषवः। संवत्सरा वैनिमिषम्। अहोरात्रावादित्यश्चन्द्रमाः। प्रवरां दिव्यां गायत्रीं सहस्रनेत्रां शरणमहं प्रपद्ये।

ॐ तत्सवितुर्वरेण्याय नमः। ॐ तत्पूर्वा जयाय नमः। तत्प्रातरादित्याय नमः। तत्प्रातरादित्यप्रतिष्ठायै नमः।

प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति। सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति। सायं-प्रातरधीयानोऽपापो भवति सर्वतीर्थेषु स्नातो भवति। सवैर्देवर्ज्ञातो भवति। अवाच्यवचनात् पूतो भवति। अभक्ष्य-भक्षणात् पूतो भवति। अभोज्य-भोजनात् पूतो भवति। अचोष्य-चोषणात् पूतो भवति। असाध्य साधनात् पूतो भवति। दुष्प्रतिग्रह-शतसहस्रात् पूतो भवति। सर्वप्रतिग्रहात् पूतो भवति। पंक्तिदूषणात् पूतो भवति। अनृतवचनात् पूतो भवति। अथाऽब्रह्मचारी ब्रह्मचारी भवति। अनेन हृदयेनाऽधीतेन ऋतुसहस्रेणेष्टं भवति। षष्टिशतसहस्रगायत्र्या जप्यानि फलानि भवन्ति। अष्टौ ब्राह्मणान् सम्यग् ग्राहयेत्। तस्य सिद्धिर्भवति।

य इदं नित्यमधीयानो ब्राह्मणः प्रातः शुचिः सर्वपापैः प्रमुच्यते, इति। ब्रह्मलोके महीयते। इत्याह भगवान् श्रीनारायणः।

लघु गायत्री - कवचम्

विनियोग

ॐ अस्य श्री गायत्रीकवचस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दो गायत्री देवता, ॐ भूः बीजम्, भुवः शक्तिः, स्वः कीलकम्, गायत्रीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

विनियोग-हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य.' से आरम्भ कर, 'जपे विनियोग:' तक मन्त्र पढ़कर नीचे गिरा देना चाहिए।

ध्यानम्

पञ्चवक्त्रां दशभुजां सूर्यकोटिसमप्रभाम्।
सावित्रीं ब्रह्मवरदां चन्द्रकोटि-सुशीतलाम्॥1॥

त्रिनेत्रां सितवक्त्रां च मुक्ताहारविराजिताम्।
वरा-ऽभयांकुश - कशा - हेमपात्राक्षमालिकाम्॥2॥

शङ्ख-चक्रा-ऽब्ज-युगलं कराभ्यां दधतीं पराम्।
सित-पङ्कज-संस्थां च हंसारूढ़ां सुखस्मिताम्॥
ध्यात्वैवं मनसाम्भोजे गायत्री-कवचं जपेत्॥3-1/2॥

ध्यान-जो गायत्री देवी पाँच मुख तथा दशभुजा वाली हैं, जिनकी कान्ति करोड़ों सूर्य के समान है, तथा करोड़ों चन्द्रमा के समान जो शीतल हैं, जो ब्रह्मा आदि देवताओं को भी वर देने वाली हैं, जिनके तीन नेत्र हैं तथा मुखमण्डल स्वच्छ (प्रसन्न) है, जो मोतियों की माला से विभूषित हैं, जिनके दशों हाथों में वर, अभय, अंकुश, कशा, स्वर्णपात्र, अक्षमाला, शंख, चक्र तथा ध्वज विराजमान हैं, जो परब्रह्म-स्वरूपिणी हैं, जो श्वेत-कमल के आसन पर विराजमान हैं, शुभ्र (सफेद) हंस जिनका वाहन है, प्रसन्नता से जो ईषद्हास्य कर (कुछ मुसका) रही हैं। साधक इस प्रकार गायत्री का हृत्कमल में ध्यान कर गायत्री - कवच का पाठ करे॥1-3-1/2॥

कवचम्

विश्वामित्र! महाप्राज्ञ! गायत्रीकवचं शृणु।
यस्य विज्ञानमात्रेण त्रैलोक्यं वशयेत् क्षणात्॥1॥

कवच-ब्रह्मा ने विश्वामित्र से कहा- हे महाबुद्धिमान् विश्वामित्र! तुम गायत्री - कवच को सुनो। जिसके केवल पाठ मात्र से ही साधक तीनों लोकों को अपने वश में कर लेता है॥1॥

सावित्री मे शिरः पातु शिखायाममृतेश्वरी।
ललाटं ब्रह्मदैवत्या भ्रुवौ मे पातु वैष्णवी॥2॥

सावित्री मेरे शिर की, अमृतेश्वरी शिखा की, ब्रह्मदैवत्या ललाट की तथा वैष्णवी दोनों भ्रुवों (भौंहों) की रक्षा करें॥2॥

कर्णौ मे पातु रुद्राणी सूर्या सावित्रिकाऽम्बिके।
गायत्री वदनं पातु शारदा दशनच्छदौ॥3॥

रुद्राणी दोनों कानों की, सूर्य में रहकर समस्त प्राणियों का सृजन करने वाली भगवती दोनों नेत्रों की, गायत्री मुख की तथा शारदा मसूड़ों की रक्षा करें॥3॥

द्विजान् यज्ञप्रिया पातु रसनायां सरस्वती।
सांख्यायनी नासिका मे कपोलौ चन्द्रहासिनी॥4॥

यज्ञप्रिया दाँतों की, सरस्वती जीभ की, सांख्यायनी नाक की तथा चन्द्रहासिनी कपोल की रक्षा करें॥4॥

चिबुकं वेदगर्भा न कण्ठं पात्वघनाशिनी।
स्तनौ मे पातु इन्द्राणी हृदयं ब्रह्मवादिनी॥5॥

वेदगर्भा चिबुक की, अघ (पाप) नाशिनी कण्ठ की, इन्द्राणी स्तन की तथा ब्रह्मवादिनी हृदय की रक्षा करे॥5॥

उदरं विश्वभोक्त्री च नाभौ पातु सुरप्रिया।
जघनं नारसिंही च पृष्ठं ब्रह्माण्डधारिणी॥6॥

विश्व-भोक्त्री पेट की, सुरप्रिया नाभि की, नारसिंही जघन की तथा ब्रह्माण्ड-धारिणी पीठ की रक्षा करें॥6॥

पार्श्वौ मे पातु पद्माक्षीगुह्यंगो-गोप्त्रिकाऽवतु।
ऊर्वोरोङ्काररूपा चजान्वोः सन्ध्यात्मिकाऽवतु॥7॥

पद्माक्षी दोनों पार्श्व की, गोप्त्रिका गुप्त स्थान की, ॐकाररूपा दोनों ऊरु की तथा सन्ध्यात्मिका दोनों जानु (घुटनों) की रक्षा करें॥7॥

जङ्घयोः पातु अक्षोभ्या गुल्फयोर्ब्रह्मशीर्षका।
सूर्या पदद्वयं पातु चन्द्रा पादाङ्गुलीषु च॥8॥

अक्षोभ्या दोनों जाँघ की, ब्रह्मशीर्षका गुल्फ की सूर्या दोनों पैरों की तथा चन्द्रा पैर के अंगुलियों की रक्षा करें॥8॥

सर्वाङ्गं वेदजननी पातु मे सर्वदाऽनघा।
इत्येतत् कवचं ब्रह्मन्! गायत्र्याः सर्वपावनम्॥9॥

सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाली वेदजननी सर्वदा हमारे सम्पूर्ण अंगों की रक्षा करें। ब्रह्मा ने कहा-हे विश्वामित्र! इस प्रकार यह गायत्री कवच सदैव साधक को पवित्र करता है॥9॥

पुण्यं पवित्रं पापघ्नं सर्वरोगनिवारणम्।
त्रिसन्ध्यं यः पठेद् विद्वान् सर्वान् कामानवाप्नुयात्॥10॥

यह गायत्री-कवच पुण्य, पवित्र, पापों को नाश करने वाला तथा रोगों को दूर करने वाला है। जो विद्वान् तीनों काल में इस गायत्री-कवच का पाठ करते हैं उनका सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध हो जाता है॥10॥

सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः स भवेद् वेदवित्तमः।
सर्वयज्ञफलं प्राप्य ब्रह्मान्ते समवाप्नुयात्॥11॥

प्राप्नोति जपमात्रेण पुरुषार्थश्चतुर्विधान्॥12॥

गायत्री-कवच के पाठ से पाठक सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्व का ज्ञाता एवं वेदज्ञ हो जाता है। और उसे सम्पूर्ण यज्ञों के फलों की प्राप्ति होती है। तथा साधक अन्त में ब्रह्म पद को प्राप्त करता है, तथा चारों पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति अनायास ही हो जाती है॥11-12॥

वसिष्ठ संहितोक्त गायत्री-कवचम्

याज्ञवल्क्य उवाच

स्वामिन् सर्वजगन्नाथ! संशयोऽस्ति महान् मम।
चतुष्षष्टि-कलानां च पातकानां च तद्वद?॥1॥

मुच्यते केन पुण्येन ब्रह्मरूपं कथं भवेत्?।
देहश्च देवतारूपं मन्त्ररूपं विशेषतः॥2॥

क्रमतः श्रोतुमिच्छामि कवचं विधिपूर्वकम्।

याज्ञवल्क्य ने कहा-हे ब्राह्मण! सम्पूर्ण चराचर विश्व के स्वामी महाब्रह्मन्! मुझे एक बहुत बड़ा संशय है कि मनुष्य को चौंसठ कलाओं की प्राप्ति तथा सम्पूर्ण पापों से छुटकारा किस पुण्य के प्रभाव से प्राप्त होता है? और वह कौन-सा कवच है जिसका विधिपूर्वक पाठ करने से मनुष्य देह, देवता तथा मन्त्ररूप हो जाता है? मैं उस कवच को सुनना चाहता हूँ।।1-2-1/2।।

ब्रह्मोवाच

गायत्र्याः कवचस्याऽस्य ब्रह्मा विष्णुः शिवो ऋषिः॥3॥

ऋग्-यजुः-सामा-ऽथर्वाणि छन्दांसि परिकीर्तिताः।
परब्रह्मस्वरूपा सा गायत्री देवता स्मृता॥4॥

ब्रह्मा ने कहा-इस गायत्री कवच के ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ऋषि हैं। ऋग् यजुः साम तथा अथर्व छन्द हैं, परब्रह्म स्वरूपा गायत्री ही देवता हैं।।2-1/2-4।।

रक्षाहीनं तु यत् स्थानं कवचेन विना कृतम्।
सर्वं सर्वत्र संरक्षेत् सर्वाङ्गं भुवनेश्वरी॥5॥

आगे कहे जाने वाले कवच में जो स्थान रक्षा के लिए नहीं कहे गये हैं, उन सभी स्थानों की रक्षा भुवनेश्वरी देवी करें। क्योंकि वे भुवनेश्वरी हैं और कोई भी स्थान भुवन से बाहर नहीं है।।5।।

बीजं भर्गश्च शक्तिश्च धियः कीलकमेव च।
पुरुषार्थ - विनियोगो यो नश्च परिकीर्तितः॥6॥

इस गायत्री कवच का 'भर्ग' बीज है, 'धियः' शक्ति है तथा 'यो नः प्रचोदयात्' यह कीलक है। चारों पुरुषार्थ की प्राप्ति के लिए इसे पढ़ना चाहिए, यही विनियोग है।।6।।

ऋषिं मूर्ध्नि न्यसेत् पूर्वं मुखे छन्द उदीरितम्।
देवता हृदि विन्यस्य गुह्ये बीजं नियोजयेत्॥7॥

शक्तिं पदोऽस्तुविन्यस्यनाभौतुकीलकंन्यसेत्।
द्वात्रिंशत्तु महाविद्याः सांख्यायनस-गोत्रजाः॥8॥

द्वादशलक्ष-संयुक्ता विनियोगः पृथक्-पृथक्।

अंगन्यास-'ऋषिभ्यो नमः' ऐसा कह कर शिर का, 'छन्दोभ्यो नमः' से हृदय का, 'बीजाय नमः' से गुह्यस्थान का, 'शक्तये नमः' से पैर का, 'कीलकाय नमः' से नाभि का स्पर्श करे। 'द्वात्रिंशन्महाविद्याभ्यो नमः' से सम्पूर्ण शरीर का स्पर्श करें। इस प्रकार पृथक्-पृथक् अंगन्यास तथा करन्यास कर, द्वादशलक्षात्मक गायत्री का जप करे।।9-8-1/2।।

एवं न्यास-विधिं कृत्वा कराङ्गंविधिपूर्वकम्॥9॥

व्याहृतित्रयमुच्चार्य अनुलोम-विलोमतः।
चतुरक्षर-संयुक्तं कराङ्गन्यासमाचरेत्॥10॥

इस प्रकार अंगन्यासकर फिर उपर्युक्त विधि से करन्यास भी करना चाहिए-'ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः' इस महाव्याहृति का अनुलोम तथा 'ॐ स्वः ॐ भुवः ॐ भूः' इस प्रकार प्रतिलोम-रूप से महाव्याहृति का उच्चारण करे। 'तत्सवितुर्वरेण्यं' 'भर्गो देवस्य' 'धीमहि धियो' 'यो नः प्रचोदयात्' इन चार मन्त्रों से करांगन्यास करे।।9-10।।

आवाहनादिभेदं च दश मुद्राः प्रदर्शयेत्।
सा पातु वरदा देवी अङ्ग-प्रत्यङ्ग-सङ्गमे॥11॥

गायत्री का आवाहनादि दशमुद्रा प्रदर्शित करें। तथा वह वरदा देवी अंग-प्रत्यंग की सन्धियों में रक्षा करें।।11।।

ध्यानं मुद्रां नमस्कारं गुरुमन्त्रं तथैव च।
संयोगमात्म-सिद्धिं च षड्विधं किं विचारयेत्॥12॥

इस प्रकार ध्यान, मुद्रा, नमस्कार, गुरुमन्त्र, संयोग तथा आत्मसिद्धि-इन छह प्रकारों से गायत्री की सिद्धि करे।।12।।

विनियोगः

ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य ब्रह्मा-विष्णु-रुद्रा, ऋषयः, ऋग्-यजुः-सामा-ऽथर्वाणिच्छन्दांसि, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्रीदेवता, भूः बीजम्, भुवः शक्तिः,

स्वाहा कीलकम्, श्रीगायत्रीप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

विनियोग-दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीगायत्रीकवचस्य.' से आरम्भ कर, 'जपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर, भूमिपर जल छोड़ दे। (मन्त्रार्थ यों है-इस गायत्री कवच के ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र ऋषि हैं, ऋग् यजुः, साम तथा अथर्व छन्द हैं, परब्रह्मस्वरूपिणी गायत्री देवता हैं, भूः बीज है, भुवः शक्ति है, स्वाहा कीलक है, गायत्री की प्रीति के लिए इसका पाठ करना चाहिए।)

ध्यानम्

वर्णास्त्रां कुण्डिकाहस्तां शुद्ध-निर्मल-ज्योतिषीम्।
सर्वतत्त्वमयीं वन्दे गायत्रीं वेदमातरम्॥1॥

ध्यान-सम्पूर्ण वर्णों के स्वरूप वाली, कुण्डिका को धारण करने वाली, शुद्ध-निर्मल ज्योति-स्वरूप वाली, सम्पूर्ण तत्त्वों से विराजमान, वेदमाता गायत्री की मैं वन्दना करता हूँ॥1॥

मुक्ता-विद्रुम-हेम-नील-धवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणै-
र्युक्तामिन्दु-निबद्ध-रत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम्।
गायत्रीं वरदाभया-ङ्कुश-कशां शूलं कपालं गुणं
शङ्खं चक्रमथारविन्दयुगलं हस्तैर्वहन्तीं भजे॥2॥

मोती, मूँगा, स्वर्ण, नील तथा स्वच्छ छाया वाले मुख से जो सुशोभित हैं तथा स्त्रियोचित सम्पूर्ण मंगलों से जो युक्त हैं, रत्नजटित चन्द्रकला से जो सुशोभित हैं, जो वर्णस्वरूप हैं तथा ब्रह्मरूपिणी हैं। जिनके हाथों में वर, अभय, अंकुश, कशा, शूल, कपाल, धनुष, शंख, चक्र तथा कमल का जोड़ा सुशोभित हो रहा है, ऐसी गायत्री देवी का मैं ध्यान करता हूँ॥2॥

कवचम्

ॐ गायत्री पूर्वतः पातु सावित्री पातु दक्षिणे।
ब्रह्मविद्या च मे पश्चादुत्तरे मां सरस्वती॥1॥

कवच-गायत्री पूर्व दिशा में, सावित्री दक्षिण दिशा में, महाविद्या पश्चिम दिशा में तथा सरस्वती उत्तर दिशा में हमारी रक्षा करें॥1॥

पावकीं मे दिशं रक्षेत् पावकोज्ज्वलशालिनी।
यातुधानीं दिशं रक्षेद्यातुधान-गणार्दिनी॥2॥

अग्नि के समान देदीप्यमान देवी अग्निकोण में, यातुधानों का नाश करने वाली

नैर्ऋत्य कोण में हमारी रक्षा करें।।2।।

पावमानीं दिशं रक्षेत् पवमान - विलासिनी।
दिशं रौद्रीभवतु मे रुद्राणी रुद्ररूपिणी।।3।।

हवा के समान विलास करने वाली देवी वायव्यकोण में, रुद्ररूपिणी भगवती रुद्राणी ईशान कोण में हमारी रक्षा करें।।3।।

ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधास्तात् वैष्णवी तथा।
एवं दश दिशो रक्षेत् सर्वतो भुवनेश्वरी।।4।।

ब्रह्माणी ऊपर तथा वैष्णवी नीचे की ओर हमारी रक्षा करें। भुवनेश्वरी सभी स्थानों में हमारी रक्षा करें। इस प्रकार उपर्युक्त सभी देवियाँ दश दिशाओं में रक्षा करें।।4।।

ब्रह्मास्त्र स्मरणादेव वाचां सिद्धिः प्रजायते।
ब्रह्मदण्डश्च मे पातु सर्वशस्त्रा-ऽस्त्र-भक्षकः।।5।।

ब्रह्मशीर्षस्तथा पातु शत्रूणां वधकारकः।
सप्तव्याहृतयः पान्तु सर्वदा बिन्दुसंयुताः।।6।।

सम्पूर्ण शस्त्रास्त्रों का विनाश करने वाला ब्रह्मदण्ड हमारी रक्षा करे। शत्रुओं का वध करने वाला ब्रह्मशीर्ष हमारी रक्षा करे। विसर्ग के सहित सप्रणव व्याहृतियाँ सर्वदा हमारी रक्षा करें।।5-6।।

वेदमाता च मांपातु स-रहस्या स-दैवता।
देवीसूक्तं सदा पातु सहस्राक्षरदेवता।।7।।

चतुष्षष्टिकलाविद्या दिव्याद्या पातु देवता।
बीजशक्तिश्च मे पातु पातु विक्रमदेवता।।8।।

सरहस्या एवं सदैवता तथा वेदमाता मेरी रक्षा करें, जिसके सहस्राक्षर-देवता हैं, वह देवी सूक्त हमारी रक्षा करें। चतु:षष्टि कला समेत दिव्य विद्या हमारी रक्षा करें, बीज शक्ति हमारी रक्षा करें, विक्रम देवता हमारी रक्षा करें।।7-8।।

तत्पदं पातु मे पादौ जङ्घे मे सवितुः पदम्।
वरेण्यं कटिदेशं तु नाभिं भर्गस्तथैव च।।9।।

गायत्री के प्रत्येक वर्ण से रक्षा कवच कहते हैं-'तत्' पद पैर की रक्षा करें, 'सवितुः पद जंघे की, 'वरेण्यं' कटि देश की तथा 'भर्ग' पद हमारे नाभि-स्थान की रक्षा करे।।9।।

देवस्य मे तु हृदयं धीमहीति गलं तथा।
धियो मे पातु जिह्वायां यः पदं पातु लोचने।।10।।

'देवस्य' हृदय की, 'धीमहि' गले की, 'धियः' जिह्वा की, 'यः' पद नेत्र की रक्षा करे।।10।।

ललाटे नः पदं पातु मूर्द्धानं मे प्रचोदयात्।
तद्वर्णः पातु मूर्द्धानं सकारः पातु भालकम्।।11।।

'नः' ललाट की, 'प्रचोदयात्' शिर की रक्षा करे। 'तत्' वर्ण मूर्धा की तथा 'स' वर्ण भाल की रक्षा करे।।11।।

चक्षुषी मे विकारस्तु श्रोत्रं रक्षेत्तु कारकः।
नासापुटे वकारो मे रेकारस्तु कपोलयोः।।12।।

'वि' वर्ण दोनों चक्षुओं की, 'तु' वर्ण दोनों कान की, 'व' नासापुटों की, 'रे' वर्ण कपोलों की रक्षा करे।।12।।

णिकारस्त्वधरोष्ठे च यकारस्तूर्ध्व ओष्ठके।
अस्यमध्ये भकारस्तु गोकारस्तु कपोलयोः।।13।।

'ण्' वर्ण अधरोष्ठ की, 'य' ऊपर के ओठ की, 'भ' वर्ण-मुख के मध्य में, 'र्गो' दोनों कपोलों की रक्षा करें।।13।।

देकारः कण्ठदेशे च वकारः स्कन्धदेशयोः।
स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारोवामहस्तकम्।।14।।

'दे' कण्ठदेश की, 'व' स्कन्धदेश की, 'स्य' दाहिने हाथ की, 'धी' बायें हाथ की रक्षा करे।।14।।

मकारो हृदयं रक्षेद् हिकारो जठरं तथा।
धिकारो नाभि-देशं तु योकारस्तु कटिद्वयम्।।15।।

'म' हृदय की, 'हि' जठर की, 'धि' नाभि-स्थान की, 'यो' दोनों कटि भाग की रक्षा करे।।15।।

गुह्यं रक्षतु योकार ऊरु मे नः पदाक्षरम्।
प्रकारो जानुनी रक्षेच्चोकारो जङ्घदेशयोः।।16।।

'यो' गुह्यांग की, 'नः' पद एवं अक्षर दोनों ऊरु की, 'प्र' दोनों घुटनों की, 'चो' दोनों जंघा की रक्षा करे।।16।।

दकारो गुल्फदेशं तु यात्कारः पादयुग्मकम्।
जातवेदेति गायत्री त्र्यम्बकेति दशाक्षरा॥17॥

इसमें 43 अक्षर, 'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। ऊर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥ इसमें 33 अक्षर तथा 24 अक्षर की गायत्री सब मिलाकर शताक्षरा गायत्री कही गयी है। तथा 'ॐ आपो ज्योति रसोऽमृतम् ॐ ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्' यह षोडशाक्षर गायत्री सर्वदा सभी जगह हमारी रक्षा करे॥17॥

सर्वतः सर्वदा पातु आपो ज्योतीतिषोडशी।
इदं तु कवचं दिव्यं बाधा-शत-विनाशकम्॥18॥

चतुष्षष्टिकलाविद्या - सकलैश्वर्य - सिद्धिदम्।
जपारम्भे च हृदयं जपान्ते कवचं पठेत्॥19॥

यह गायत्री का कवच सैकड़ों बाधाओं को नष्ट करने वाला है, चौंसठ कलाओं तथा समस्त ऐश्वर्य को देने वाला है। गायत्री-जप के आरम्भ में गायत्री-हृदय तथा जप के अन्त में गायत्री कवच का पाठ करना चाहिए॥18-19॥

स्त्री-गो-ब्राह्मण-मित्रादि-द्रोहाद्यखिल-पातकैः।
मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधि-गच्छति॥20॥

यह स्त्री वध, गो वध, ब्राह्मण वध तथा मित्र द्रोह आदि पापों को नष्ट करने वाला है। गायत्री-कवच का पाठ करने वाला पुरुष परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त कर लेता है॥20॥

पुष्पाञ्जलिं च गात्र्या मूलेनैव पठेत् सकृत्।
शतसाहस्त्र-वर्षाणां पूजायाः फलमाप्नुयात्॥21॥

इस गायत्री के कवच का सदैव पाठ कर मूल मन्त्र से गायत्री को एक बार भी पुष्पांजलि देने से सैकड़ों तथा हजारों वर्ष के गायत्री-पूजा का फल प्राप्त होता है॥21॥

भूर्जपत्रे लिखेत्वैतत् स्वकण्ठे धारयेद्यदि।
शिखायां दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा धारयेद् बुधः॥22॥

जो बुद्धिमान् पुरुष इस गायत्री-कवच को भोजपत्र पर लिख कर, कण्ठ, शिखा तथा दाहिने हाथ में अथवा मणिबन्ध में धारण करते हैं॥22॥

त्रैलोक्यं क्षोभयेत् सर्वं त्रैलोक्यं दहति क्षणात्।
पुत्रवान् धनवाञ्छ्रीमान् नानाविद्यानिधि भवेत्॥23॥

वे क्षण-भर में त्रैलोक्य को क्षुब्ध कर सकते हैं अथवा तीनों लोक का नाश कर सकते हैं। वे पुत्रवान्, धनवान्, श्रीमान् तथा अनेक विद्याओं के निधि विशेषज्ञ बन जाते हैं।।23।।

ब्रह्मास्त्रादीनि सर्वाणि तदङ्गस्पर्शनात्ततः।
भवन्ति तस्य तुच्छानि किमन्यत् कथयामि ते।।24।।

इस गायत्री-कवच के पाठ के फल को बहुत कहने से क्या? ब्रह्मास्त्र आदि भी उसके अंग के स्पर्श से तुच्छ हो जाते हैं।।24।।

अभिमन्त्रित-गायत्री-कवचं मानसं पठेत्।
तज्जलं पिबतो नित्यं पुरश्चर्य्याफलं भवेत्।।25।।

जो लोग गायत्री-कवच से जल को अभिमन्त्रित कर उसे सदैव पीते हैं वे पुरश्चरण के फल को प्राप्त करते हैं।।25।।

लघुसामान्यकं मन्त्रं महामन्त्रं तथैव च।।
यो वेत्ति धारणां युञ्जन् जीवन्मुक्तः सउच्यते।।26।।

गायत्री का लघुमन्त्र, सामान्य मन्त्र तथा महामन्त्र को जो व्यक्ति जानता है और उसका जप करता है वह 'जीवन्मुक्त' हो जाता है।।26।।

सप्तव्याहृति-विप्रेन्द्र! सप्तावस्थाः प्रकीर्तिताः।
सप्तजीवसता नित्यं व्याहृती अग्निरूपिणी।।27।।

हे विप्रेन्द्र! यह सात महाव्याहृतियाँ जीव की सात अवस्थाएँ हैं तथा अग्निरूपिणी हैं।।27।।

प्रणवे नित्ययुक्तस्य व्याहृतीषु च सप्तसु।
सर्वेषामेव पापानां सङ्करे समुपस्थिते।।28।।

शतं सहस्त्रमभ्यर्च्य गायत्रीपावनं महत्।
दशशतमष्टोत्तरशत-गायत्री पावनं महत्।।29।।

प्रणवपूर्वक सप्तव्याहृति का जप करने वाले पुरुष को सभी पापों के सांकर्य उपस्थित हो जाने पर सौ अथवा हजार भी गायत्री के जप से उसकी शुद्धि हो जाती है, क्योंकि एक हजार अथवा एक सौ आठ भी गायत्री का जप अत्यन्त पावन-पवित्रकारक है।।28-29।।

भक्तिभाजो भवेद् विप्रः सन्ध्याकर्मसमाचरेत्।
काले काले प्रकर्त्तव्यं सिद्धिर्भवति नाऽन्यथा।।30।।

गायत्री में भक्ति (निष्ठा) रखने वाला पुरुष सर्व-प्रथम सन्ध्योपासन करे, फिर समय से गायत्री का जप करे तभी उसे सिद्धि होती है अन्यथा नहीं।।30।।

प्रणवं पूर्वमुद्धृत्य भूर्भुवः स्वस्तथैव च।
तूर्यं सहैव गायत्रीजप एवमुदाहृतम्।।31।।

साधक को सर्व-प्रथम प्रणव का उच्चारण करना चाहिए। पश्चात् 'भूर्भुवः स्वः' का, फिर गायत्री के चारों पाद का ('तत्' से प्रचोदयात् पर्यन्त) इस प्रकार गायत्री के जप की विधि कही गयी है। 'ॐ भूर्भुवः स्वः तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्' यही जप का प्रकार है।।31।।

तुरीयपादमुत्सृज्य गायत्रीं च जपेत् द्विजः।
स मूढो नरकं याति कालसूत्रमधोगतिः।।32।।

जो ब्राह्मण गायत्री के चौथे पाद ('धियो-प्रचोदयात्') को छोड़कर सप्रणव, सव्याहृति गायत्री का जप करता है। वह मूर्ख कालसूत्र नामक नरक में जाकर अधोगति को प्राप्त करता है।।32।।

मन्त्रादौ जननं प्रोक्तं मन्त्रान्ते मृतसूत्रकम्।
उभयोर्दोषनिर्मुक्तं गायत्री सफला भवेत्।।33।।

मन्त्र का आदि जनन है तथा मन्त्र के अन्त में मृतसूत्र है। इसलिए दोनों दोष रहित सम्पूर्ण गायत्री का जप करना चाहिए।।33।।

मन्त्रादौ पाशबीजं च मन्त्रान्ते कुशबीजकम्।
मन्त्रमध्ये तु या माया गायत्री सफला भवेत्।।34।।

मन्त्र के आदि में पाशबीज है तथा मन्त्र के अन्त में कुश-बीज है, मन्त्र के मध्य में माया है, जो ऐसा जानता है उसके द्वारा किया गया गायत्री का जप सफल है।।34।।

वाचिकस्त्वहमेव स्यादुपांशु शतमुच्यते।
सहस्त्रं मानसं प्रोक्तं त्रिविधं जपलक्षणम्।।35।।

जप तीन प्रकार का होता है-1. वाचिक, 2. उपांशु, 3. मानस। वाचिक जप का सामान्य फल होता है। उसकी अपेक्षा उपांशु का सौ गुना फल होता है तथा वाचिक से मानस का फल सहस्त्र गुना होता है। यह तीनों प्रकार के जपों का फल होता है।।35।।

अक्षमालां च मुद्रां च गुरोरपि न दर्शयेत्।
जपं चाक्षस्वरूपेणा - ऽनामिका - मध्यपर्वणि॥36॥

अनामा मध्यमा हीना कनिष्ठादिक्रमेण तु।
तर्जनी - मूलपर्यन्तं गायत्रीजपलक्षणम्॥37॥

पर्वभिस्तु जपेदेवमन्यत्र नियमः स्मृतः।
गायत्रीवेदमूलत्वाद् वेदः पर्वसु गीयते॥38॥

जपमाला, मुद्रा, गुरु को भी नहीं दिखाना चाहिए, अनामिका के मध्य-पर्व से लेकर कनिष्ठा के पर्व से तर्जनी के मूल पर्यन्त जप करना गायत्री जप का लक्षण है। इस प्रक्रिया में मध्यमा का मध्य पर्व सुमेरु होता है, उसका लंघन नहीं करना चाहिए। गायत्री वेद का मूल मन्त्र है और वेद का मूल पर्व में है॥36-38॥

दशभिर्जन्मजनितं शतेनैव पुरा कृतम्।
त्रियुगं तु सहस्राणि गायत्री हन्ति किल्विषम्॥39॥

गायत्री का जप दश जन्म, सौ जन्म तथा सहस्र जन्म के पापों को दूर करता है॥39॥

प्रातःकालेषु कर्तव्यं सिद्धिं विप्रो य इच्छति।
नादालये समाधिश्च सन्ध्यायां समुपासते॥40॥

जो ब्राह्मण सिद्धि की इच्छा रखता है, उसे प्रातःकाल में गायत्री का जप करना चाहिए और जो सन्ध्या में गायत्री की उपासना करता है। उसे अनहद नाद में समाधि होती है॥40॥

अङ्गुल्यग्रेण यज्जप्तं यज्जप्तं मेरुलङ्घने।
असंख्यया च यज्जप्तं तज्जप्तं निष्फलं भवेत्॥41॥

जो जप अंगुलि के अग्र-भाग से किया जाता है, तथा जो सुमेरु का लंघन कर जप किया जाता है अथवा बिना संख्या के जो जप किया जाता है, उस जप का कोई फल नहीं होता, वह जप निष्फल ही है॥41॥

विना वस्त्रं प्रकुर्वीत गायत्री निष्फला भवेत्।
वस्त्रतुच्छं न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः॥42॥

जो जप वस्त्र के भीतर (गोमुखी आदि) में नहीं किया जाता अथवा जो जप वस्त्रके पिछले भाग (अन्तिम भाग) में किया जाता है, वह जप निष्फल होता है॥42॥

गायत्रीं तु परित्यज्य अन्यमन्त्रमुपासते।
सिद्धान्नं च परित्यज्य भिक्षामटति दुर्मतिः॥43॥

जो गायत्री को छोड़ कर अन्य मन्त्र की उपासना करता है वह मूर्ख अपने घर सिद्ध अन्न का परित्याग कर भिक्षा माँगता फिरता है।।43।।

ऋषिच्छन्दो देवताख्या बीजं शक्तिश्चकीलकम्।
नियोगं न च जानाति गायत्री निष्फला भवेत्।।44।।

जो गायत्री के ऋषि, छन्द, देवता, बीज, शक्ति, कीलक तथा विनियोग को नहीं जानता उसके गायत्री के जप का फल-निष्फल होता है।।44।।

वर्ण-मुद्रा-ध्यानपदमावाहन-विसर्जनम्।
दीपं चक्रं न जानाति गायत्री निष्फला भवेत्।।45।।

जो गायत्री का वर्ण (ध्यान), मुद्रा, ध्यान पद, आवाहन, विसर्जन तथा दीप चक्र को नहीं जानते, उनके गायत्री का जप निष्फल होता है।।45।।

शक्तिं न्यासस्तथा स्थानं मन्त्र-सम्बोधनं परम्।
त्रिविधं यो न जानाति गायत्री निष्फला भवेत्।।46।।

जो शक्ति, न्यास, स्थान, मन्त्र तथा सम्बोधन तथा तीन प्रकार के जप को नहीं जानते, उनको गायत्री के जप का फल नहीं होता।।46।।

पञ्चोपकारकांश्चैव होमद्रव्यं तथैव च।
पञ्चाङ्गं च बिना नित्यं गायत्री निष्फला भवेत्।।47।।

जो गायत्री के पंचोपचार पूजन, होम, द्रव्य तथा पंचांग को नहीं जानते उनको गायत्री के जप का फल नहीं होता है।।47।।

मन्त्रसिद्धिर्भवेज्जातु विश्वामित्रेण भाषितम्।
व्यासो वाचस्पतिर्जीवस्तुता देवो तपःस्मृतौ।।48।।

जो लोग उपर्युक्त सभी विधियों को जानते हैं, उन्हें निश्चय ही सिद्धि मिलती है, ऐसा विश्वामित्र का मत है। व्यास, वाचस्पति, बृहस्पति तो स्तुति, तपस्या, तथा स्मृति (ध्यान) से ही सिद्धि मानते हैं।।48।।

सहस्त्रजप्ता सा देवी ह्युपपातकनाशिनी।
लक्षजाप्ये तथा तच्च महापातकनाशिनी।।
कोटि-जाप्येन राजेन्द्र! यदिच्छति तदाप्नुयात्।।49।।

गायत्री के सहस्त्र संख्या जप से उपपातक का नाश हो जाता है। एक लाख जप से महापातक का नाश होता है, तथा करोड़ जप से मनुष्य जो चाहता है प्राप्त कर लेता है।।49।।

न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः।
शिष्येभ्यो भक्तियुक्तेभ्यो ह्यन्यथामृत्युमाप्नुयात्।।50।।

गायत्री कवच तथा जपादि की उपर्युक्त विधि दूसरे के शिष्य को नहीं देनी चाहिए। अपने शिष्य तथा भक्त को ही यह सब कहना चाहिए अन्यथा वह मृत्यु को प्राप्त कर लेता है।।50।।

गायत्रीबीजसंयुतं

गायत्री-रामायणम्

ध्यानम्

वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामण्डपे
मध्ये पुष्पकमासने मणिमये वीरासने सुस्थितम्।
अग्रे वाचयति प्रभञ्जनसुते तत्त्वं मुनिभ्यः परं
व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतंरामं भजेश्यामलम्।।

ध्यान-कल्पवृक्ष के नीचे, बड़े मण्डप वाले, मणिमय सुवर्ण निर्मित, पुष्पक विमान के मध्य, श्रीरामचन्द्रजी के चरणों में वीरासन में स्थिति, प्रभंजनसुत हनुमानजी के आगे समस्त ऋषिवृन्दों के परमतत्त्व भूत इष्ट का व्याख्यान रूप से वाल्मीकि मुनि कर रहे हैं। ऐसे लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न से घिरे हुए, वैदेही सहित, नील कमल के समान श्याममूर्ति वाले, श्रीरामजी का मैं गुणगान करता हूँ।

ॐ तपःस्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्।
नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुङ्गवम्।।1।।

तपस्वी, ज्ञानियों में श्रेष्ठ, सर्वदा तप एवं वेद स्वाध्याय में रत नारजी से मुनियों में श्रेष्ठ बाल्मीकि मुनि ने प्रश्न किया।।1।।

सह त्वां राक्षसान् सर्वान् यज्ञघ्नान्रघुनन्दनः।
ऋषिभिः पूजितस्तत्र यथेन्द्रो विजये पुरा।।2।।

हे नारद! यज्ञ को नष्ट करने वाले, सम्पूर्ण राक्षसों के विनाशक, मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् राम ने समस्त ऋषियों के साथ आपका उसी प्रकार पूजन किया जिस प्रकार पूर्व समय में इन्द्र ने अपने विजय काल में आपका पूजन किया था।।2।।

विश्वामित्रस्तु धर्मात्मा श्रुत्वा जनकभाषितम्।
वत्स राम! धनुः पश्य इति राघवमब्रवीत्।।3।।

जिस समय धर्मात्मा राजर्षि विश्वामित्र ने परम ब्रह्मज्ञानी राजा विदेह (जनक) से इस वृत्तान्त को सुना। उस समय विश्वामित्र ने राम से इस प्रकार कहा कि हे वत्स राम! इस धनुष की ओर देखो।।3।।

तुष्टावास्य तदा वशं प्रविश्य स विशाम्पतेः।
शयनीयं नरेन्द्रस्य तदासाद्य व्यतिष्ठत।।4।।

वनवासं हि सङ्ख्याय वासांस्याभरणानि च।
भर्तारमनुगच्छन्त्यै सीतायै श्वशुरो ददौ।।5।।

जिस समय मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम अपने गृह वैदेही (सीता) सहित पधारे उस समय कैकेयी द्वारा चौदह वर्ष के वनवास की आज्ञा प्राप्त कर अपने पिता दशरथ के प्रिय शयनकक्ष में गये। तब अपने पुत्र को देखकर राजा दशरथ अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा चौदह वर्ष की वनवास संख्या युक्त चौदह रत्न एवं वस्त्र सीता को उनके श्वसुर दशरथ ने प्रदान किया।।4-5।।

राजा सत्यं च धर्मश्च राजा कुलवतां कुलम्।
राजा माता पिता चैव राजा हितकरोनृणाम्।।6।।

क्योंकि, शास्त्र विचार से राजा ही सत्य एवं सभी धर्मो के धर्मरूप हैं। उसी प्रकार राजा ही समस्त कुलीनों के कुलरूप तथा सभी प्रजाओं के माता-पिता रूप भी वहीं हैं। और अपनी प्रजा के कल्याण करने वाले भी वही हैं।।6।।

निरीक्ष्य स मुहूर्तं तु ददर्श भरतो गुरुम्।
उटजे राममासीनं जटामण्डलधारिणम्।।7।।

जिस समय भरत ने राम के वनवास का समाचार सुना, उस समय क्षणभर रुककर भरत ने अपने गुरु विश्वामित्र की ओर देखा। तब विश्वामित्र ने भरत से इस प्रकार कहा कि यदि तुम्हें घनघोर जंगल में जटा-जूट युक्त राम को।।7।।

यदि बुद्धिः कृता द्रष्टुमगस्त्यं तं महामुनिम्।
अद्यैव गमने बुद्धिं रोचयस्व महायशः।।8।।

देखने की इच्छा हो तो महामुनि यशस्वी अगस्त्य मुनि के आश्रम में इसी समय जाने की तैयारी करो।।8।।

भरतस्याऽऽर्यपुत्रस्य श्वश्रूणां मम च प्रभो!।
मृगरूपमिदं व्यक्तं विस्मयं जनयिष्यति।।9।।

राम की आज्ञा से जब भरत अपनी राजधानी अयोध्या लौट आये तब अगस्त्य मुनि ने भविष्यवाणी के रूप में राम से इस प्रकार कहा कि हे प्रभो! आर्य-पुत्र भरत

आपके श्वसुर राजा जनक तथा मुझे भी यह सुवर्ण मृग अत्यधिक आश्चर्यकारी मालूम पड़ेगा। क्योंकि सुवर्ण का मृग ही आश्चर्यकारक है।।9।।

गच्छ शीघ्रमितो राम! सुग्रीवं तं महाबलम्।
वयस्यं तं कुरु क्षिप्रमितो गत्वाऽद्य राघव!।।10।।

जब राम ने मायामृग मारीच का वध किया तब मरते-मरते भी उस दुष्ट मारीच ने 'हा लक्ष्मण! हा लक्ष्मण!' इस प्रकार राम की आवाज में लक्ष्मण ने जब सुना, उसी समय लक्ष्मण सीता को पर्णकुटी में अकेली छोड़ राम की सहायता के लिए दौड़े। तब दुष्ट रावण ने सीता-हरण कर लेने पर अपनी पर्णकुटी में लौट आये। सीता को वहाँ न देखकर विलाप करने लगे। उस समय महामुनि ने कहा-हे राम! आप यहाँ से शीघ्र किष्किन्धा की ओर जाइए। और अतिशीघ्र वहाँ जाकर महाबलशाली सुग्रीव से मित्रता कीजिए।।10।।

देशकालौ भजस्वाऽद्य क्षममाणः प्रियाऽप्रिये।
सुख - दुःखसहः काले सुग्रीववशगो भव।।11।।

पुनः अगस्त्यमुनि ने राम से इस प्रकार कहा कि हे राम! आप यद्यपि सर्वान्तर्यामी हैं तथापि इस समय देश-काल के अनुसार सुख-दुःखों को सहन करते हुए सुग्रीव के साथ मित्रता करें। कारण कि, समय के अनुसार सुख-दुःखों को सहन करना ही पड़ता है।।11।।

वन्द्यास्ते तु तपःसिद्धास्तपसा वीतकल्मषाः।
प्रष्टव्या चाऽपि सीतायाः प्रवृत्तिर्विनयान्वितैः।।12।।

अहह! वे वीतरागी सिद्ध तपस्वी जो कि निरन्तर आपका ही मानसिक ध्यान किया करते हैं फिर भी आपका दर्शन योग-दृष्टि से भी नहीं कर पाते हैं। परन्तु इस समय वे तपस्वीगण आपको साक्षात् अपने समक्ष देखकर कृतकृत्य हो जायेंगे। हे राम! ऐसे तपस्वी लोग समस्त प्राणिमात्र के लिए बन्दनीय हैं। अतः उनसे भी आप नम्र होकर सीता का समाचार पूछें।।12।।

स निर्जित्य पुरीं श्रेष्ठां लङ्कां तां कामरूपिणीम्।
विक्रमेण महातेजा हनूमान् कपिसत्तमः।।13।।

तदनन्तर सुग्रीव के आदेशानुसार कपियों (वानरों) में सर्वश्रेष्ठ महातेजस्वी पवनसुत हनुमान् अपने अतुल पराक्रम से माया रूप उस श्रेष्ठ लंका नगरी पर निश्चय ही विजय प्राप्त करेंगे। क्योंकि, आपके चरण-कमल के सेवन से वानर होते हुए भी लंकाधिपति रावण का मान मर्दन करें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?।।13।।

धन्या देवाः स-गन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः।
मम पश्यन्ति ये नाथं रामं राजीवलोचनम्॥14॥

हे राम! वे देवगण, अप्सराओं सहित गन्धर्व समूह, समस्त सिद्ध, ऋषि-महर्षि कमल नेत्र वाले ध्यानैकगम्य मेरे इष्टदेव मर्यादा पुरुषोत्तम राम का साक्षात् इन्हीं नेत्रों से दर्शन करते हैं। अतः वे सभी अपने पूर्व संचित पुण्य-प्रताप से आपके दर्शन के कारण धन्य हैं॥14॥

मङ्गलाभिमुखी तस्य सा तदासीन्महाकपेः।
उपतस्थे विशालाक्षी प्रयता हव्यवाहनम्॥15॥

वीर-श्रेष्ठ हनुमान् ने लंका में जाकर जिस समय एकमात्र परम धार्मिक लंकेश्वरानुज विभीषण का घर छोड़कर समस्त लंका दहन कर दिया अर्थात् अग्निदेव को प्रसन्न किया, उस समय महाकपि हनुमान् के सम्मुख पतिव्रता सती-साध्वी सीता उपस्थित हुईं॥15॥

हितं महार्थं मृदुहेतु संहितं
व्यतीत कालायति सम्प्रति क्षमम्।
निशम्य तद्वाक्यमुपस्थितज्वरः
प्रसङ्गवानुत्तरमेतदब्रवीत्॥16॥

तत्पश्चात् हनुमान ने सीताजी से कहा कि माँ! मुझे बड़ी भूख लगी है। सीता जी की आज्ञा से अशोक वन में समस्त फल खाकर कुछ समय विश्राम करने के बाद अग्निदाह रूपी ज्वर से सन्तप्त हितकारी अत्यन्त गुरुतर होते हुए भी मृदु (कोमल) रूप से प्रसंगवश सीता से इस प्रकार कहा कि हे माता, समर्थ रूप आपके पति के लिए तो इस लंका का क्षणमात्र में नष्ट करना असम्भव नहीं है परन्तु आप कुछ समय प्रतीक्षा करें। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम स्वयं लङ्का को जीत कर निश्चित ही आपको ले जायेंगे। इस प्रकार कह कर माता जानकी की चूड़ामणि लेकर समुद्र उल्लंघन करते हुए पुनः राम के पास आकर उनसे माता सीता का समस्त वृत्तान्त कह सुनाया॥16॥

धर्मात्मारक्षमां श्रेष्ठः सम्प्राप्तोऽयं विभीषणः।
लङ्कैश्वर्यं ध्रुवं श्रीमानयं प्राप्नोत्यकण्टकम्॥17॥

उसके बाद अपने परम धार्मिक चार मन्त्रियों के साथ राक्षसों में श्रेष्ठ धर्मात्मा विभीषण रावण से प्रताड़ित होकर राम की शरण में आये। उस समय समस्त कपियों ने राम से कहा कि हे नाथ, वे विभीषण ही लंकाधिपति रावण की मृत्यु के अनन्तर लङ्का के स्वामी होंगे॥17॥

यो वज्रपाताशनि - सन्निपातात्
न चुक्षुभे नाऽपि चचाल राजा।
स रामबाणाभिहतो भृशार्तः
चचाल चापं च मुमोच वीरः॥18॥

जो लङ्काधिपति रावण दधीचि मुनि के हड्डी द्वारा निर्मित वज्र के प्रहार से भी न तो विचलित होता था और न उक्त व्रज उसका कुछ अनिष्ट ही कर सकता था। राम के सफल बाणों से युद्धस्थल में विभीषण द्वारा निर्दिष्ट रावणोदरस्थ अमृत कुण्ड के शोषण होने पर अत्यन्त तड़पते हुए रावण ने राम के सामने ही अपने प्राणों का परित्याग किया॥18॥

यस्य विक्रममासाद्य राक्षसा निधनं गताः।
तं मन्ये राघवं वीरं नारायणमनामयम्॥19॥

न ते ददृशिरे रामं दंहन्तमरिवाहिनीम्।
मोहिताः परमास्त्रेण गान्धर्वेण महात्मना॥20॥

रावण की मृत्यु के बाद भगवान् राम अदृष्ट होकर गान्धर्वास्त्र द्वारा समस्त सेना को मोहित करते हुए शेष राक्षसगण राम के अतुल पराक्रम को जानकर यम के अतिथि हुए अर्थात् परमलोक को प्राप्त हुए। उसी समय कुछ बचे हुए राक्षसों ने राम को सुख-दुःखादि रहित नारायण भगवान् स्वरूप मानने लगे॥19-20॥

प्रणम्य देवताभ्यश्च ब्राह्मणेभ्यश्च मैथिली।
बद्धाञ्जलिपुटा चेदं उवाचाऽग्निसमीपतः॥21॥

पुनः मैथिली (सीता) ने समस्त देवगण, ब्राह्मणों के समक्ष प्रणाम करती हुई अग्नि को साक्षिभूत कर अर्थात् अग्नि में प्रविष्ट होकर उस प्रज्वलित अग्नि में से हाथ जोड़ती हुई प्रकट होकर अपनी पवित्रता का परिचय समस्त प्राणिमात्र के सम्मुख दिया॥21॥

चालनात् पर्वतस्यैव गणा देवस्य कम्पिताः।
चचाल पार्वती चाऽपि तदाश्लिष्टा महेश्वरम्॥22॥

उस समय समस्त कैलासादि पर्वत डगमगाने लगे और शिव के नन्दी, भृङ्गी आदि गण विचलित हुए, साथ ही साथ पार्वती भी अत्यन्त शोक से व्याकुल होकर एकाएक शङ्कर का आलिंगन करने लगीं॥22॥

दाराः पुत्राः पुरं राष्ट्रं भागाच्छादनभोजनम्।
सर्वमेवाविभक्तं नौ भविष्यति हरीश्वर!॥23॥

शङ्करजी ने कहा- हे हरीश्वर राम! स्त्री, पुत्र, नगर, राष्ट्र भोग, आच्छादन, भोजन ये सभी हमारे और आपके मध्य एक ही होंगे। क्योंकि कहा है कि 'शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णुश्च हृदयः शिव' अर्थात् हम दोनों एक ही स्वरूप हैं।।23।।

यामेव रात्रिं शत्रुघ्नः पर्णशालामुपाविशत्।
तामेव रात्रिं सीताऽपि प्रसूता दारकद्वयम्।।24।।

इस प्रकार लंका में विजय प्राप्त कर भगवान्, राम सकुशल अपनी अयोध्या नगरी लौट आये। जिस दिन अपने ननिहाल में स्थित शत्रुघ्न अपनी पर्णशाला में आये उसी दिन लोकापवाद के भय से निष्कासित जानकी ने महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में लव-कुश नाम के जुड़वाँ पुत्रों को उत्पन्न किया।।24।।

इदं रामायणं कृत्स्नं गायत्रीबीजसंयुतम्।
सकृत पठनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते।।25।।

फल-श्रुति- गायत्री बीज नामक इस पच्चीस-श्लोकी रामायण को जो भक्तगण पाठ करते हैं, उनके पाठ मात्र से ही समस्त पाप स्वतः समूल नष्ट हो जाते हैं।।25।।

गायत्री-चालीसा

दोहा

मातु चरण में नाई सिर, कथा कहउँ चालीस।
पढ़े सुने पूजन किये, होवे सब अघ खीस।।

चौपाई

जय जय मातेश्वरि गायत्री। सकल विश्व पालन लय कर्त्री।।
श्वेत पद्म सम नेत्र तुम्हारा। अस्तुति करहिं देव-मुनि सारा।।
कोटि सूर्य सम कान्ति तुम्हारा। तव महिमा है अपरम्पारा।।
शंख चक्र कर में तुम धारा। शोभै गल बिच मुक्ताहारा।।
तीन नेत्र तव त्रिपद सुवेशा। रूप न कहि सक शारदा शेषा।।
प्रातः सायं अरु मध्याना। मन में लावै तुम्हरो ध्याना।।
प्रातः ब्रह्मस्वरूपिणी बाला। रुद्राक्षहिं की है गल माला।।
हाथ कमण्डलु हंस सवारी। देखि रूप मोहै नर-नारी।।

मध्यानहि में विष्णु-स्वरूपा। सब जग पालक सृष्टि अनूपा॥
ताही समय गरुड़ को वाहन। अभय करहु सुर-नर मुनि देवन॥
युवती रूप तुम्हारो तबहीं। वेद पुराण कहत हैं सबहीं॥
शिवरूपहिं तुम सायंकाला। कर त्रिशूल अरु उन्नत भाला॥
वृद्धा वयस तुम्हारो जानै। शिवरूपिणी तुम्हें तब मानै॥
वाहन है तब वृषभ तुम्हारा। संतत पालहु सब संसारा॥
पंचानन दश भुज अवतारा। वर्णन करत सकल संसारा॥
जो यह रूप त्रिकालहिं ध्यावै। करि पूजा नित सीस नवावै॥
जाप करै मन नितही नेमा। उर में लावै तव पद प्रेमा॥
तेहि कर होय परम कल्याना। सत्य वचन यह मृषा न आना॥
पूजन जाप विविध बहु रूपा। तदपि कहउँ मैं मति अनुरूपा॥
ध्यान करै आवाहन कीजै। आसन पाद्य अर्घ्य तब दीजै॥
पंचामृत अस्नान करावै। गन्ध लगाइ वस्त्र पहिरावै॥
कुंकुम अक्षत फूल चढ़ावै। धूप दीप नैवेद्य दिखावै॥
ऋतुफल पान सुपारी देवै। प्रेम-सहित तव चरणन सेवै॥
करै आरती तव मन लाई। जासों सब विधि कष्ट नसाई॥
हवन करै चौबीस हजारा। मन्त्र उचारै तिल घृत डारा॥
वाको सकल पाप कट जावै। विद्या बल ऐश्वर्य बढ़ावै॥
घृत मजीठ मधु फूल पलाशा। हवन किये पूरन हो आशा॥
हवन करै द्विज कहें जो कोई। कृपा तुम्हारि अवशि सिध होई॥
तीन सहस्र बार तव जापा। हरत सकल संसृत परितापा॥
बार हजार हवन नित कीजै। लोध पुष्प संग गोघृत लीजै॥
ईति-भीति ताकर सब नाशै। बल बुधि विद्या तेज प्रकाशै॥
खैर काष्ठ घृत लालहिं चन्दन। चन्द्रग्रहण महँ होमहिं जो जन॥
रत्नादिक धन पावै सोई। अल्पकाल महँ दुख क्षय होई॥
घृत युत चम्पक अरु मन्दारा। हवन करै तव बार हजारा॥

वस्त्रादिक सुख भोगै नाना। कृपा तुम्हारि मिटहिं अज्ञाना॥
मधु संग सैंधव लवण मिलावै। दश सहस्र तव हवन करावै॥
ताके वश सब नर अरु नारी। जो होवै तव मातु पुजारी॥
पुष्प कनेर हवन कर जोई। तन महँ ताके ताप न होई॥
लक्षहिं एक हवन कर जोई। इच्छित फल पावै नर सोई॥
कहँ लगि महिमा कहौं तुम्हारी। क्षमहु मातु सब चूक हमारी॥

देवपराध-क्षमापन-स्तोत्रम्

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जानेस्तुति-कथाः।
न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणम्॥1॥

विधेरज्ञानेन द्रविण - विरहेणा - ऽलसतया
विधेयाऽशक्यत्वात् तव चरणयोर्या च्युतिरभूत्।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति॥2॥

पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः।
मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति॥3॥

जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता
न वा दत्तं देवि! द्रविणमपि भूयस्तव मया।
तथाऽपि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत् प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति॥4॥

परित्यक्ता देवा विविध-विधि-सेवाकुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नाऽपि भविता
निरालम्बो लम्बोदर-जननि कं यामि शरणम्॥5॥

श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि-कनकैः।

तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ॥6॥

चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पटधरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः।
कपाली-भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं
भवानि त्वत्पाणि-ग्रहण-परिपाटी-फलमिदम्॥7॥

न मोक्षस्याऽऽकांक्षा भव-विभव-वाञ्छाऽपिनपुनः।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै
मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः॥8॥

नाऽऽराधिताऽसि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्ष-चिन्तन-परैर्न कृतं वचोभिः।
श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे
धत्से कृपामुचितमम्ब! परं तवैव॥9॥

आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि।
नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधा-तृषार्ता जननीं स्मरन्ति॥10॥

जगदम्ब! विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणाऽस्ति चेन्मयि।
अपराध-परम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम्॥11॥

मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि।
एवं ज्ञात्वा महादेवि! यथायोग्यं तथा कुरु॥12॥

इति देव्यपराध-क्षमापन-स्तोत्रं समाप्तम्।

गायत्री माता की विधि-विधान पूर्वक उपासना करके साधक अपनी और समाज तथा राष्ट्र की विपत्तियों को दूर भगाकर सर्वत्र विषम भाव का विष के समान परित्याग करके अमृत के समान सम भाव को धारण करने के लिए सतत् प्रयत्नशील हों।

वेद भगवान् ने इस प्रकार उपदेश दिया है कि-

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ (ऋ.वे. 10/181/4)

आप सभी मनुष्यों की आकूति अर्थात् संकल्प, निश्चय, प्रयत्न एवं व्यवहार समान सम भाव वाले, सरल-कपटता आदि दोषों से रहित स्वच्छ रहें, एवं आप सभी

मानवों के हृदय भी समान-निर्द्वन्द, हर्ष-शोक रहित सम भाव वाले रहें तथा आप सब मानवों का मन भी समान-सुशील एक प्रकार के सहभाव वाला रहे।

जिस प्रकार आप सब का अच्छा सहभाव, धर्म, अर्थ आदि का समुच्चय सम्पादित हो, उसी प्रकार आपके आकृति-हृदय एवं मन हों।

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवाभागं यथापूर्वे सं जानाना उपासते।। ऋ. 10/181/2

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सभी लोग सुखी रहें,

सर्वे सन्तु निरामयाः, सभी लोग रोग रहित हो।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, सभी कल्याण को देखें

मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात्, कोई भी व्यक्ति दुःख को प्राप्त न हो।।

शून्यचक्र

सहस्त्रदलपद्म (BRAIN)

विसर्गपरमशिव
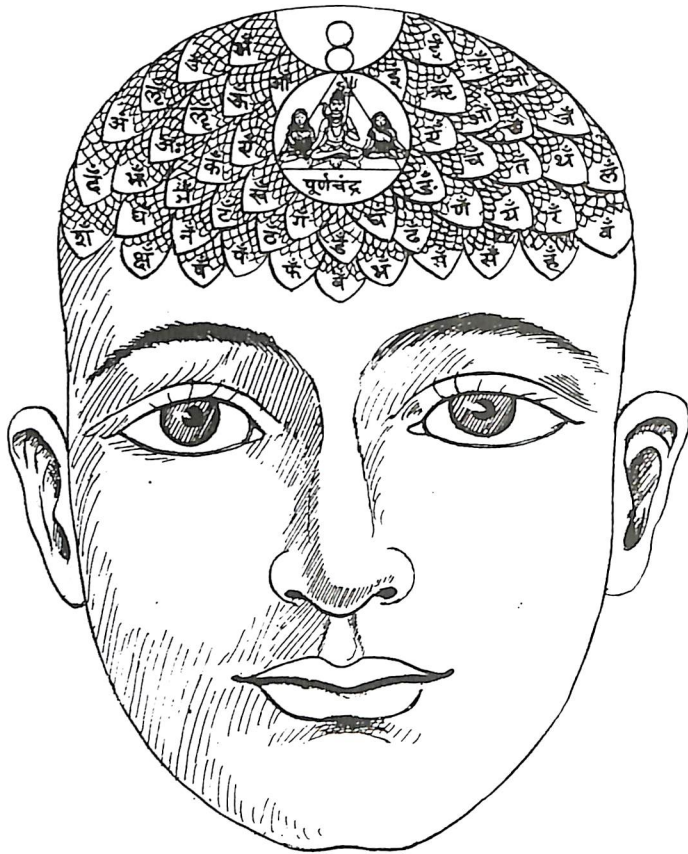
नामचक्र - शून्य
स्थान - मस्तक
दल - सहस्त्र
दलों के अक्षर - अँ से क्षँ तक
लोक - सत्य:

1. नामतत्व - तत्वातीत
2. तत्वबीज - विसर्ग
3. वीज का वाहन - विन्दु
4. देव - परब्रह्म
5. देवशक्ति - महाशक्ति
6. यंत्र - पूर्णचन्द्रनिराक
7. ध्यानफल - अमर-मुत्त

उत्पत्तिपालन में समर्थ, आकाश गयी समाधि में युक्त होता है।

गायत्रीयन्त्रम्

गायत्रीयन्त्रम्

पराजितायै नमः
ब्रह्माय नमः
आदित्याय नमः
ब्राह्म्यै नमः
सावित्र्यै नमः
कान्त्यै नमः
संध्यायै नमः
आदित्याय नमः
भूः

परिशिष्ट

कार्य सिद्धर्थ कुछ विशेष प्रयोग

1. शमी 11 (जंड़), वृक्ष की समिधा से भूत बाधा तथा गृहदोष शान्त होते हैं। क्षीर वृक्ष (जिन वृक्षों में दूध हो) (पीपल, पाकड, गूलर और वट् वृक्ष की गीली समिधाओं से हवन करें, या क्षीर वृक्षों के टुकडों से हवन करें।
2. दोनों हाथों में जल लेकर सूर्य का तर्पण करें, इससे शान्ति का अनुभव होगा।
3. भूत पिशाचादि बाधा से, घर, गांव, पुर, राष्ट्र मुक्त हो जाते हैं। द्रष्टव्य (श्रीमद्देवी भागवत् अ. 24 पृ. 750)
4. शनिवार को पीपल वृक्ष के नीचे गायत्री का सौ बार जप करें, इससे भूत, रोग तथा जादू टोने से उत्पन्न भय दूर हो जाता है।
5. गाठों पर से गुडूची (गिलोय) के टुकडों को दूध में भिगोकर हवन करने से अथवा महामृत्युञ्जय मंत्र से हवन करने पर व्याधियों का नाश होता है।
6. ज्वर शान्ति के लिए दूध में भिगोये गए आम के पत्तों की आहुति देनी चाहिए।
7. दूध में भिगोए गये "वच" (वरयां) का हवन करने से क्षय रोग समाप्त होता है।
8. अपामार्ग (पडकंड़ा) के बीजों से हवन करने पर अपस्मार (मिर्गी) रोग का नाश होता है।
9. पिपीलिका (चींटि) मधुवल्मीक (दीमक) के द्वारा घर में उपद्रव होने पर घृत युक्त शमी (जंड़) की समिधाओं से तथा भात से सौ-सौ आहुतियां-दीक्षित द्विज को देनी चाहिये। ऐसा करने से उपद्रव शान्त हो जाता है।
10. यदि कोई दीक्षित व्यक्ति सौ बार गायत्री मन्त्र का जप कर जिस दिशा में मिट्टी का ढेला फेंकता है, उस दिशा में अग्नि, वायु तथा शत्रुओं से होने वाला भय दूर हो जाता है।
11. मन ही मन गायत्री मंत्र का जप करने से बन्धन में पड़ा मनुष्य बन्धन से छूट जाता है।

12. पुष्पों की आहुति देकर पुष्टि तथा लक्ष्मी प्राप्त होती है।

13. लक्ष्मी की कामना करने वाले पुरुष को कमल पुष्पों से हवन करना चाहिए। विल्ववृक्ष की सामिधाओं से हवन करके मनुष्य लक्ष्मी प्राप्त करता है।

इस प्रकार-गायत्री मंत्र के निर्धारित जप से हवन से निर्दिष्ट विधियों के अतिरिक्त कई प्रकार कार्य सिद्ध कर सकते हैं। सिद्धि प्राप्ति के लिए विधि विधान पूर्वक गायत्री का उपासक होना आवश्यक है।

घी-शक्कर और मधु मिलाकर सात दिन तक गायत्री मंत्र से सौ-सौ आहुतियां देकर (हवन करने पर) विवाह के लिए सुन्दर कन्या की प्राप्ति होती है।

होमपूर्वक सूर्य को पायसान्न अर्पण करके ऋतु स्नान की हुई स्त्री को भोजन कराने से पुत्र की प्राप्ति होती है।

1. एक मास तक कमल से हवन करने पर।

2. एक मास तक विल्व वृक्ष के नीचे आसन लगाकर जप करने से।

3. विल्व वृक्ष की जड़, फूल, फल और पत्तों से हवन करने पर राज्य मिलता है। राज्य प्राप्ति अथवा अधिकार प्राप्ति होती है।

विपरीत गायत्री को 'अनुलोम जप' कहते हैं यही अग्नेयास्त्र है।

जैसे-

त्या दचो प्रनः यो यो धि हिम धी यस् वदेर्गो
भ यंण रेर्वतु वि सत् त वः स् वः र्भु भू ॐ।

इस आग्नेयास्त्र मन्त्र की विधि को अर्थात् जो पुरुष इस आग्नेयास्त्र छोड़ने तथा खींचने की विधि को जानता है, जो गुरु द्वारा शिक्षित है उसके अधिकार में त्रैलोक्य है।

जैसे कहा है-

आग्नेयास्त्रस्य जानाति विसर्गादान पद्धतिम्।
यः पुमान् गुरुणा शिष्टस्तस्याधीनं जात्रयम्।।

विशेषद्रष्टव्य गायत्री महाविज्ञान भाग-2 तथा श्रीमद्देवी भागवत्

"संक्षिप्त गायत्री मन्त्रार्थ और महत्व"

चारों वेदों के सार भूत गायत्री मन्त्र को प्राय: सभी विद्वान् जानते हैं यह मन्त्र ही ब्रह्म और जीवात्मा की एकता का बोधक है। सम्पूर्ण श्रुति, स्मृति, इतिहास पुराण

इत्यादि का यही लक्ष्य है कि सांसारिक दु:ख की निवृत्ति तथा शाश्वत आनन्द की प्राप्ति हो, यह केवल गायत्री मन्त्र द्वारा ही फलीभूत हो सकता है, गायत्री मन्त्र का जप करने से मल, विक्षेप और आवरण का नाश हो जाता है। "यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि" यज्ञों में मैं जप यज्ञ हूँ। भगवान् कृष्ण के इस गीता वचन के अनुसार सम्पूर्ण यज्ञों में हिंसा तथा द्रव्यव्यय के अभाव के कारण जप यज्ञ का महत्व सर्वाधिक है। "सर्वेषां जपसूक्तानां गायत्री परमो जप:" पाराशर मुनि के वचनानुसार सभी जपों में गायत्री जप सर्वश्रेष्ठ है। बिना अर्थ ज्ञान के ॐकार का जप करना और बिना अर्थ ज्ञान के अन्य मन्त्रों का जप तथा वेद और धर्म शास्त्रों का अध्ययन करना भूसी अथवा आटे से निकले तुष समूह को कूटने के समान है। इस लिए गायत्री मन्त्र का अर्थज्ञान भी परमावश्यक है। भगवद्गीता में कहा है कि "गायत्री छन्दसामहम्" अ. 10।35 अर्थात् छन्दों में गायत्री छन्द मैं हूँ। "गायत्री छन्दसां मातेति" महानारायणोपनिषद् का यह वाक्य इस अर्थ को प्रकट करता है कि गायत्री वेदों का आदि कारण है–

नास्ति गंगासमं तीर्थं न देव: केशवात्पर:।
गायात्र्यास्तु परं जप्यं न भूतं न भविष्यति।। वृ.यो.याज्ञ.अ. 10।10।2।79

इस से भी यही प्रतीत होता है कि गायत्री से परे न कोई जप हुआ है न होगा।

गायत्रीचैव वेदाश्च ब्रह्मणा तोलिता पुरा।
वेदेभ्यश्च सहस्त्रेभ्यो गायत्र्यति गरीयसी।। वृ. पाराशर. 5।16

इस पद्यानुसार पूर्वकाल में ब्रह्मा ने गायत्री और वेदों को तोला तो सभी वेदों से भी गायत्री का पल्ला भारी रहा। अधिक क्या देवी भागवत के स्कन्ध 11-12 अ. 16-8 श्लो. 15-9।

मनुस्मृति में, अत्रिस्मृति में, वृ. सन्ध्याभाष्य में, सूतसंहिता के यज्ञ वैभव खण्ड में, गायत्री तत्व में, सूर्योपनिषद् में, छान्दोग्योपनिषद् में, शाङ्करभाष्य में, कूर्मपुराण में, ऋषि श्रृंगादियों में गायत्री महत्व को देखा जा सकता है।

प्रात: काल की सन्ध्या में गायत्री नाम से, मध्याह्न में "सावित्री" तथा सायं काल में सरस्वती नाम से–यही गायत्री वर्णित की गई है।

ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है कि "गयान् प्राणान् त्रायते सा गायत्री" अर्थात् गय नाम प्राण का है प्राणों की रक्षा करने के कारण इस उपासनीय देवी का नाम गायत्री है। गायन्तं त्रायते इति गायत्री, जो जप करने वालों की रक्षा करती है इस लिए इसका नाम गायत्री है।

गायत्री मन्त्र इस प्रकार है–

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो योनः प्रचोदयात्।

सर्व प्रथम इस मन्त्र में ॐकार है जो तीनों व्याहृतियों का सार है, ओंकार परब्रह्म है सभी मन्त्रों में श्रेष्ठ है सर्व प्रथम तप से सिद्ध हुए ब्रह्मा के मुख से प्रकट हुआ है।

ॐकार अ,-उ,-म,-तथा अर्ध मात्रा ँ इन चारों के संयोग से बना है यही चारों अक्षर ऋक्-यजुः, साम, और अथर्व वेद हैं। भू र्भुवः, स्वः और महा व्याहृतियां भी यही हैं, रजोगुण, सत्वगुण, तमोगुण और निर्गुण। ब्रह्मा-विष्णु-शिव तथा निराकार। जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति, तुरीया। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास। धर्म, अर्थ, काम, मोक्षादि भी यही चारों है, इन चारों से संयुक्त रुप से बना ॐकार सर्व व्यापि है, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड इसी में निहित है, इसी लिए कहा गया है कि "अवति संसार सागरादिति ओ३म् संसार सागर से जो रक्षा करता है वह ओ३म् है।

गायत्री मन्त्र में ॐकार के बाद व्याहृतियां आती है। जो भूः भुवः, स्वः नाम से विख्यात है, व्याहृति शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार कही गयी है विशेषण आहृतिः सर्वविराजः प्राह्वानं प्रकाशीकरणं व्याहृतिः। विशेष रूप से आहृति अर्थात् सर्वविराट् का बोध, प्रकाश करने से व्याहृति नाम हुआ। व्याहृतियों का अर्थ इस प्रकार है-

भूः - भवतीति भूः सर्वेषामुत्पतिस्थानं लिङ्गस्थानं, पातालादि सप्तभुवनसहितो भूर्लोकश्च। वृ. यो. याज्ञ. अ. 3।16

जो सभी का उत्पत्ति स्थान है, लिङ्ग स्थान है पातालादि सप्तभुवन सहित भू लोक है, जिस में चराचर प्राणि उत्पन्न होते हैं इस लिए भूः प्रथम व्याहृति कही गई है।

भुवः - भावयति स्थापयति विश्वमिति भुवः। सायन भाष्य

संसार की जो स्थापना करे उसे भुवः नाम से कहा गया है। कल्पान्त में भोग केक्षय के पश्चात् फिर उपभोग के लिए उत्पन्न होते हैं इस लिए भुवः कहा गया है।

स्वः - सु अवति प्राप्नुवते, इति स्वः।

अवति का अर्थ परिपूर्ण होता है ठीक तरह परिपूर्ण होने "स्व" नाम व्याहृतियों में चरितार्थ होता है। देह के देवता जिस से प्रकट हों उसे स्वः कहा जाता है जो स्वर्ग लोक है।

ततः - मन्त्र में यह अव्यय पद मरोक्ष अर्थ के लिए आया है अर्थात् जो दिखाई

न दे। तत् शब्द मन्त्र में आए हुए "भर्ग" शब्द का विशेषण है। तत् शब्द से आत्म रूप स्वतः सिद्ध परब्रह्म कहा जाता है।

ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः। भगवद्गीता 17।3

ओं-तत्-सत् यह ब्रह्म के तीन नाम कहे गये है, तत् भी ब्रह्म का ही नाम है।

सवितुः – "षुञ्" धातु प्राणि के उत्पन्न करने के अर्थ में है।

"षु" धातु का अर्थ उत्पत्ति और ऐश्वर्य है।

"षू" धातु का अर्थ प्रेरणा करना भी है।

इन्हीं धातुओं से सविता रूप बनता है, जो चराचर संसार को उत्पन्न करता है, जो ऐश्वर्य का स्थान है जो सभी को अपने-अपने कार्यकलाप में प्रेरणा करता है यह सवितादेव सूर्यमण्डल के अन्तर्गत ईश्वर है।

वरेण्यम् – जो वर्णन करने के योग्य सर्वश्रेष्ठ हैं वही वेरण्य शब्द से कहा गया है–

वरेण्यं वरणीयञ्च संसारभयभीरुभिः।
आदित्यान्तर्गतं यच्च भर्गाख्यं वा मुमुक्षुभिः॥ यो याज्ञं 9।57

संसार के भय से डरे हुए पुरूषों से अथवा मुक्ति की इच्छा रखने वाले पुरुषों के द्वारा आदित्य के अन्तर्गत जो भर्ग नाम का तेज है वह प्रार्थनीय है।

भर्ग : – उपासना करने वालों के पाप के भञ्जन का कारण होने से भर्ग नाम है। अज्ञान के दोषों का नाश करने वाला एकमात्र जो ज्ञान स्वरूप है- वह भर्ग कहलाता है।

पाप और जन्म मरणादि दुःखों का मूल कारण जिससे नाश हो वह भर्ग है।

"गायत्र्येव भर्गः तेजो बै गायत्री" यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि गायत्री ही भर्ग है तथा तेज ही गायत्री है।

देवस्य – जो प्रकाश स्वरूप है जो चर-अचर संसार को प्रकाशित करता है वह देव है।

सभी प्राणियों में आत्मरूप से जो प्रकाश करता है स्तुतियों के द्वारा जो पूजा जाता है, इसलिए इस सर्वव्यापी को देव कहा गया है।

धीमहि - इस शब्द का अर्थ ध्यान करना है अर्थात् मैं उस परब्रह्म स्वरूप का ध्यान करता हूँ। किसी वस्तु में अनुराग से युक्त होने का नाम ध्यान है। ध्यान से मोक्ष और मोक्ष से सुख की प्राप्ति होती है। जो ध्यान करता है उसका ध्यान करने योग्य परमात्मा से अभेद होना ध्यान कहलाता है।

धियः - बुद्धियों को "धियः" शब्द कहा गया है। धारण करने वाली बुद्धि को धी कहते हैं अर्थात् जो धर्मादि विषयों को धारण करे उस बुद्धि को धी कहते हैं।

यः - जो सत्य ज्ञानादि रूप ब्रह्म है, जो जीवात्मा रूप है, जो सविता देव है।

नः - इस शब्द का अर्थ हमारा है। अर्थात् हमारी बुद्धियों को।

प्रचोदयात् - इसका अर्थ प्रेरणा करना है, अचेतनों के अचैतन्य को चैतन्य करने वाला भगवान् प्रेरित करे। धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष में हम-लोगों की बुद्धि को प्रेरित करे।

(क) जो सविता देव का तेज हम सब के द्वारा प्रार्थनीय है जप करने वालों के पापों का जो नाश करता है-उस तेज की हम उपासना करते हैं, वह तेज-हमारी बुद्धि को उत्तम कार्य करने में प्रेरित करे।

(ख) उस सूर्य देव का जो भर्ग रूप तेज प्रार्थनीय है उसका हम ध्यान करते हैं वह हमारी बुद्धि को ब्रह्म रुप में प्रेरित करे।

इस प्रकार बताये गये गायत्री मन्त्र के अर्थ को जानकर गायत्री जप करने में प्रवृत्त हों, निश्चित हो साधक तथा जापक सम्पूर्ण मनोभिलषित कामनाओं को पूर्ण करेंगे-

गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओंकारः पुरुषः स्मृतः।
ताभ्यामुभय संयोगाद् जगत्सर्वं प्रबर्तते॥

यन्मण्डलं ज्ञानधनंत्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम्।
समस्ततेजोमय दिव्यरूपं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम्॥

विशेष– इस प्रकार गायत्री मंत्र के अर्थ को हृदय में बिठाकर जप करें निश्चित ही साधक सन्ध्योपासना से तथा जप से मनोऽभिलषित कामनाओं को पूर्ण करेंगे।

गायत्री उपासना में तथा पुरश्चरण में ध्यानगम्य षट्चक्रों का विवरण
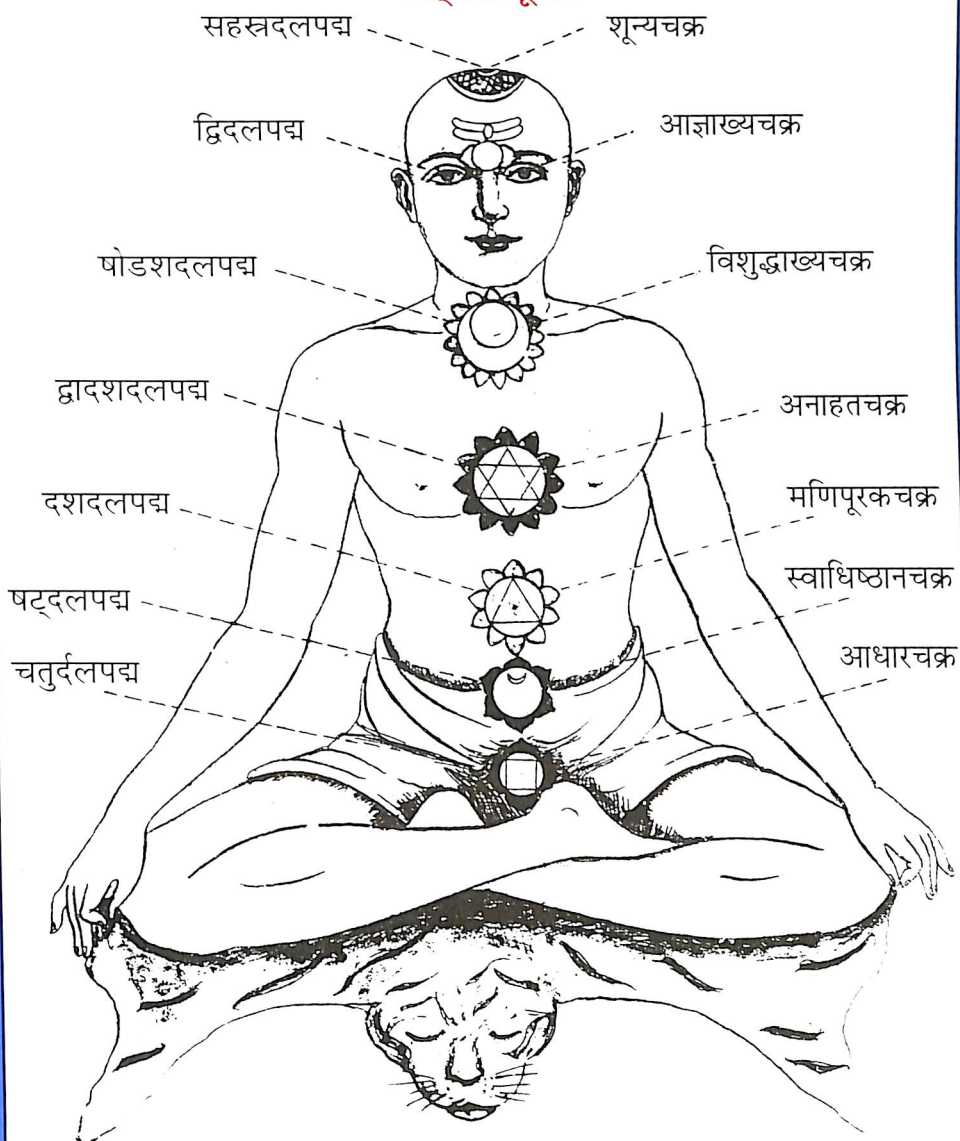
परम तपस्वी सर्वदा वन्दनीय

पं. यशपाल जी शर्मा

बावा बल्लो जी के स्थान का प्राकृतिक चित्र
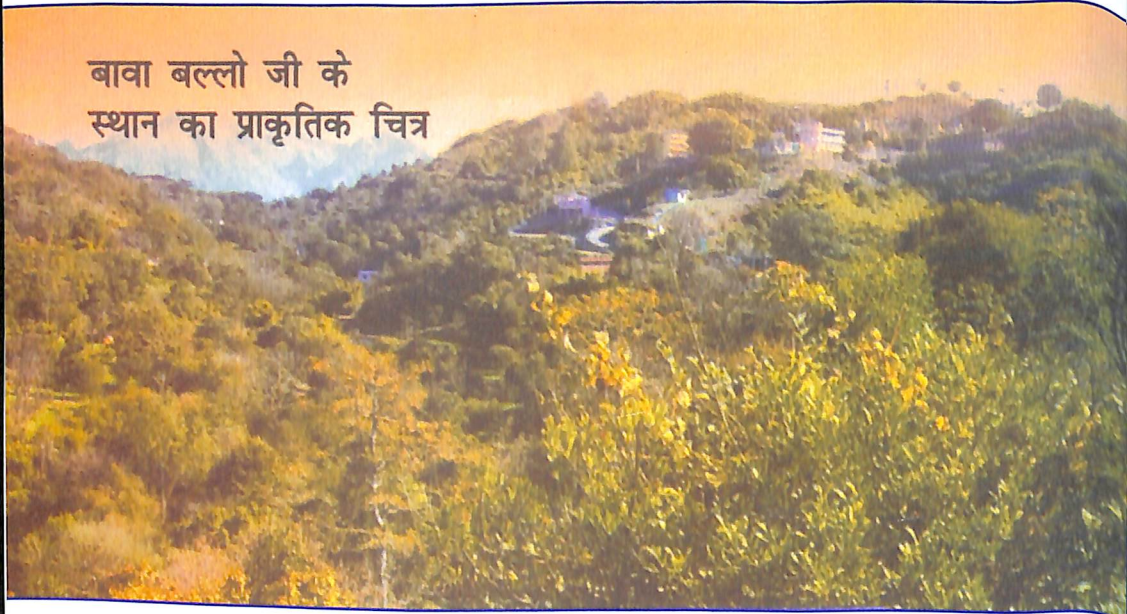
सौम्य संवत्सर 2073, माघ शुक्ल पंचमी, तदनुसार 1 फरवरी 2017 ई० को वसन्त पंचमी के पावन अवसर पर गायत्री के परम उपासक ब्रह्मलीन योगीराज बावा बल्लोजी की जयन्ती के शुभ अवसर पर सादर समर्पित।

प्रो. विश्वमूर्ति शास्त्री
राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त
पूर्व प्राचार्य, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान
मानित विश्वविद्यालय (कोट-भलवाल)
जम्मू तवी